एमन्त बिचारि दुहेँ होइले बाहार ।
गज अश्व रथ रथी अपारु अपार ।। १०० ।।
जय जय रामचन्द्र जय चापधारी ।
ए भव जळरु मोते कर बेगे पारि ।। १०१ ।।
बीर महाबीर केते के पारिब गणि ।
राम पादे मन रखि चक्रधर भणि ।। १०२ ।।

पाताळकेतु ओ कळ्पासुर माया जुद्ध, राम भरत शत्रुघ्न ओ सुग्रीवर कूपे पड़िबा एवं बिभीषण प्रभृतिंक मोह

एथु अन्ते जाहा हेला शुण शाकम्बरी ।
प्रचण्ड पर्बते थिले प्रभु चापधारी ।। १ ।।
चाहिंले दानब थाटे न दिशइ दिग ।
पाताळकेतुर रथ होइअछि आग ।। २ ।।
माया रथ गोटि दिशे अत्यन्त सुन्दर ।
पच्छरे दिशन्ति थाट अपारु अपार ।। ३ ।।
देखिण हनुकु चाहिँ बोइले तू चाहाँ ।
बहुत असुर थाटे नाहिँ पुणि राहा ।। ४ ।।
आग होइअछि देखि एक महाबीर ।
न दिशइ थाटरे त असुर ईश्वर ।। ५ ।।

ऐसा विचार करके दोनों बाहर निकले । अपार-अपार हाथी, घोड़े, रथ और रथी थे । १०० रामचन्द्र जी की जय हो, जय हो । धनुर्धारी की जय हो । इस भवजल से शीघ्र ही मेरा उद्धार करो । १०१ कितने वीर और महान पराक्रमी थे, कौन गणना कर सकता था ? श्रीराम थे चरणों में मन लगाकर चक्रधर वर्णन कर रहा है । १०२

पाताळकेतु और कल्पासुर का माया-युद्ध, राम भरत, शत्रुघ्न और सुग्रीव का कुएं में गिरना एवं बिभीषण आदि का मोह

हे शाकम्बरी ! इसके अनन्तर जो भी हुआ उसे सुनो ! धनुर्धारी श्रीराम प्रचण्ड पर्वत पर थे । १ उन्होंने दानव-सेना की ओर देखा । दिशायें नहीं दिखाई दे रही थीं । पाताळकेतु का रथ आगे था । २ माया का रथ अत्यन्त मनोहर दिखाई दे रहा था । उसके पीछे अपार सेना दिखाई दे रही थी । ३ देखते ही उन्होंने हनुमान से कहा कि तुम देखो, असुरों की अपार सेना है । कहीं रास्ता नहीं है । ४ एक महान योद्धा

चाहिँ देला हनुमान दानव थाटकु ।
बेग होइ जिबा चाल बोइला रामकु ॥ ६ ॥
समस्ते मरिबे केहि न जिबे उबुरि ।
तोहर जेबेटि दया थिब चापधारी ॥ ७ ॥
घड़िकरे मारि सबु करि देबि पदा ।
एमन्त कहिण हनु माइलाक कुदा ॥ ८ ॥
करे एक शाळवृक्ष धरि धाएँ हनु ।
धाइँला पर्वत धारे बाळि राजा सूनु ॥ ९ ॥
नळ नीळ दुहेँ दुइ बृक्ष धरि हाते ।
डेइँ डेइँ गले हनुमानर पाञ्चाते ॥ १० ॥
जाम्बवान बूढ़ा करे धरिअछि गिरि ।
दिशइ प्रळय काळे भइरब परि ॥ ११ ॥
मन्थिले असुर सैन्य न करि बिचार ।
जेसने सागर पूर्वे मन्थिला मन्दर ॥ १२ ॥
पबन जेसने भांगे कंदळी बनकु ।
तेसने माइला जाइ कोपे असुरकु ॥ १३ ॥
बिभीषण शत्रुघन भरत ए तिनि ।
अनुक्षणे बिन्धुछन्ति करे धनु घेनि ॥ १४ ॥

आगे है। परन्तु सेना में असुरेश्वर तो नहीं दिखाई दे रहा है। ५ हनुमान ने असुर-सेना को देखा। उन्होंने श्रीराम से शीघ्र ही चलने को कहा। ६ सभी मरेंगे, कोई भी बचकर नहीं जाएगा। हे धनुर्धारी ! यदि आपकी दया हुई। ७ एक घड़ी में ही सबको मारकर ढेर कर दूँगा। ऐसा कहकर हनुमान ने छलांग लगा दी। ८ हनुमान हाथ में एक शाल का वृक्ष लेकर दौड़ रहे थे। तभी बालिनन्दन अगद एक पर्वत लेकर दौड़ पड़े। ९ नल और नील दोनों दो वृक्षों को हाथ में लेकर उछल-उछलकर हनुमान के पीछे गये। १० वृद्ध जामवन्त हाथों में पर्वत लिये हुए थे। वह प्रलयकालीन भैरव के समान दिखाई दे रहे थे। ११ उन्होंने बिना विचारे ही असुर-सैन्य को मथना प्रारम्भ कर दिया जैसे प्राचीन काल में मन्दराचल ने समुद्र को मथा था। १२ जैसे वायु केले के वन को नष्ट कर देती है वैसे ही उन्होंने क्रोधित होकर असुरों का संहार किया। १३ विभीषण शत्रुघ्न तथा भरत यह तीनों धनुष लेकर प्रतिक्षण बाण छोड़ रहे थे। १४ पातालकेतु ने श्रीराम के साथ युद्ध किया।

पाताळकेतु श्रीराम संगे कला रण ।
धनुधरि अनुक्षणे बिन्धुअछि बाण ।। १५ ।।
श्रीराम कतूरी बाणे काटिले ता धनु ।
हाबड़ा बाणरे पुणि दशरथ सूनु ।। १६ ।।
माया रथ गोटा तार करि देले चूना ।
धइला दइत कोपे बाण सूचीमूना ।। १७ ।।
आन धनु धरि बिन्धे उभा होइ तळे ।
से धनु गोटाकु राम काटि देले हेळे ।। १८ ।।
धइला शूकर रूप मायावी दनुज ।
बाबल बाण धइले प्रभु रघुराज ।। १९ ।।
पळाइला से दनुज राम आगे आगे ।
श्रीराम गोड़ाइ गले ताकु अति रागे ।। २० ।।
पळाए शूकर पच्छे गोड़ान्ति श्रीराम ।
धाइँछन्ति प्रभु रागे होइ तम तम ।। २१ ।।
खण्डे दूर जाइ दैत्य करे धनुधरि ।
उभा हेला से शूकर रूप छाड़ि करि ।। २२ ।।
चाण्ड बाण प्रहारिला रामंक उपरे ।
श्रीराम काटिले ताहा आद्रावळ शरे ।। २३ ।।

धनुष लेकर वह प्रतिपल बाण छोड़ रहा था। १५ श्रीराम ने कर्तुरी शर से उसके धनुष को काट डाला। फिर दशरथ-नन्दन ने हाबड़ा बाण से उसके माया रथ को चूर-चूर कर दिया। तब दैत्य ने कुपित होकर सूचीनोक बाण उठा लिया। १६-१७ वह नीचे खड़े होकर दूसरा धनुष लेकर बाण मार रहा था। श्रीराम ने खेल-खेल में उसके धनुष को काट दया। १८ मायावी दैत्य ने शूकर का रूप धारण कर लिया। रघुनाथ जी ने बावल नाम का बाण उठा लिया। १९ वह दैत्य राम के आगे-आगे भागा। श्रीराम कुपित होकर उसका पीछा करने लगे। २० शूकर भाग रहा था, श्रीराम उसे खदेड़ रहे थे। वह क्रोध से तमतमाते हुए उसका पीछा कर रहे थे। २१ थोड़ी दूर जाकर वह दैत्य हाथ में धनुष उठाकर शूकर रूप त्यागकर खड़ा हो गया। २२ उसने राम के ऊपर चाण्ड नामक बाण से प्रहार किया। श्रीराम ने उसे आद्रावल बाण से काट दिया। २३ यह देखकर असुर ने बीस बाण मारे। उन्हें

ता देखि बिंशति बाण माइला असुर ।
पाञ्च बाणे छेदिले ता प्रभु रघुबीर ।। २४ ।।
दश बाणे धनु काटि कले छिन्न भिन्न ।
शूकर रूपरे दैत्य छाड़िला गर्जन ।। २५ ।।
श्रीराम बोइले कोपे जिबु आज काहिं ।
तिनि भुबनरे तोते रखिबाकु नाहिं ।। २६ ।।
शूकर रूपे दानब गला खण्डे दूर ।
गोड़ान्ति असुर पच्छे पच्छे रघुबीर ।। २७ ।।
से रूपकु छाड़ि पुणि दैत्य रूप धरि ।
गदा एक बुलाइला चक्रप्राय करि ।। २८ ।।
दानव गदाकु राम काटि देले बाणे ।
धइला शूकर रूप दैत्य ततक्षणे ।। २९ ।।
पळाइला श्रीरामंक आगे आगे पुणि ।
गोड़ाइले ताहाकु जे प्रभु रघुमणि ।। ३० ।।
बहुत बन पर्बत बुलाइला दैत्य ।
भ्रमन्ति मायारे पड़ि प्रभु रघुनाथ ।। ३१ ।।
क्षणके शूकर हुए क्षणके असुर ।
धनु धरि राम संगे करइ समर ।। ३२ ।।

भगवान श्रीराम ने पाँच बाणों से काट दिया । २४ दस बाणों से धनुष को काटकर छिन्न-भिन्न कर दिया । तब दैत्य शूकर का रूप धारण करके गर्जना करने लगा । २५ श्रीराम ने कुपित होकर कहा, अरे ! आज तू कहाँ जाएगा ? तीनों लोकों में कोई भी तेरी रक्षा नही कर सकता । २६ शूकर के रूप में दानव थोड़ी दूर गया । रघुवीर राम असुर को पीछे से खदेड़ रहे थे । २७ उस रूप को छोड़कर पुनः दैत्य का रूप धारण करके उसने चक्र के समान एक गदा घुमाई । २८ श्रीराम ने दानव की गदा को बाण से काट दिया । तभी दैत्य ने शूकर-रूप धारण कर लिया । २९ वह पुनः श्रीराम के आगे-आगे भागा । रघुकुल-मणि श्रीराम ने पुनः उसे खदेड़ा । ३० दैत्य ने उन्हें बहुत से जगलों और पहाड़ों में घुमाया । माया में पड़कर प्रभु रघुनाथ जी चक्कर लगा रहे थे । ३१ एक क्षण के लिए वह शूकर और एक क्षण के लिए वह असुर हो जाता था और श्रीराम के साथ धनुष लेकर युद्ध कर रहा था । ३२ इस प्रकार वह राम को बहुत दूर ले गया । राजा राम

एमन्ते रामंकु नेला बहु दूर जाए।
जाणि न पारन्ति दैत्य माया रामराये ।। ३३ ।।
पशिला शूकर रूपे पाताळ बिबरे।
गर्त्त मध्ये पशिगले राम कोपभरे ।। ३४ ।।
घोर अन्धकार तहिँ न दिशइ पथ।
आगरे दइत जाए पच्छे रघुनाथ ।। ३५ ।।
गर्जन तर्जन करि जाउछि असुर।
शबद बारि धामन्ति राम धनुर्द्धर ।। ३६ ।।
एमन्ते प्रभुंकु नेइ दैत्य माया रूपे।
पकाइ देला पाताळपुरे अन्ध कूपे ।। ३७ ।।
महाभयंकर कूप जोजने गभीर।
सूर्य्यंकर त्रास नाहिँ महा अन्धकार ।। ३८ ।।
जळ पबनहिँ नाहिँ से कूप भितरे।
पड़िलेक प्रभु तहिँ असुर मायारे ।। ३९ ।।
से कूप भितरे अछि एक महानाग।
मिळिला से सर्प आसि श्रीरामंक आग ।। ४० ।।
देखिण से दूर्वादळ श्यामळ मूरति।
कमळनयन दीर्घबाहु दीर्घछाति ।। ४१ ।।

दैत्य की माया को समझ नहीं पा रहे थे। ३३ वह शूकर के रूप में पाताल-विवर में घुसा। क्रोध में भरकर श्रीराम गढ्ढे में घुस गये। ३४ घने-अँधेरे के कारण वहाँ मार्ग नहीं दिखाई दे रहा था। आगे-आगे दैत्य और पीछे-पीछे श्रीरघुनाथ जी चले जा रहे थे। ३५ असुर गर्जन-तर्जन करते हुए चला जा रहा था। धनुर्धारी श्रीराम शब्द के सहारे दौड़ रहे थे। ३६ इसके प्रकार मायावी दैत्य ने प्रभु राम को ले जाकर पातालपुरी के अन्ध कूप में गिरा दिया। ३७ अत्यन्त भयानक कूप एक योजन गहरा था। उस महान अन्धकार को सूर्य का भय नहीं था। अर्थात् उसमें सूर्य की किरण भी प्रवेश नहीं कर पाती थी। ३८ उस कुएँ के भीतर जल और हवा भी नहीं थी। असुर की माया से प्रभु राम उसी में गिर गये। ३९ उस कुएँ के भीतर एक विशाल नाग था जो श्रीराम के निकट आ पहुँचा। ४० उसने दूर्वादलश्यामल दीर्घबाहु एवं विस्तीर्ण वक्षस्थल वाले कमललोचन को देखकर मन में विचार किया कि यह तो पुरुषोत्तम हैं। इस कुएँ में पधार कर कैसे बस

मने बिचारिला एत परम पुरुष ।
ए कूप मध्ये केमन्ते कले आसि बास ।। ४२ ।।
जोगबळे जाणिला से महायोगी नाग ।
भाळिला मोहर आसि उदे हेला भाग्य ।। ४३ ।।
राम रूपी बिष्णुंकु मुँ कलि दरशन ।
पाप तूळा राशि कि जे प्रभु हुताशन ।। ४४ ।।
पामर राक्षस आणि पकाइला एथे ।
एहांकु एठारे मुहिँ रखिबि केमन्ते ।। ४५ ।।
एमन्त बिचारि सेहि नागराज नेइ ।
से कूप मध्यरे तांकु जतने रखइ ।। ४६ ।।
राक्षस मायारे ज्ञान जाइअछि हजि ।
काहिँ से अछन्ति किछि न पारन्ति बुझि ।। ४७ ।।
प्रभुंक अन्धकूपरे पकाइ असुर ।
पाताळपुरु से पुणि होइला बाहार ।। ४८ ।।
मायावी कळपासुर करि अछि माया ।
लुचाइ रखिछि तहिँ आपणार काया ।। ४९ ।।
भरत शत्रुघ्न बाणे मुण्ड पड़े छिड़ि ।
कपि बीरे काहाकुबा मारन्ति कचाडि ।। ५० ।।
बिभीषण बाणे छिड़ि पड़न्ति बा केते ।
बहुत मरि पड़न्ति हनुमान हाते ।। ५१ ।।

गये । ४१-४२ उस महान योगी नाग ने योग के बल से ज्ञात कर लिया । उसने सोचा कि मेरा भाग्य उदय हो गया । मैंने राम रूपी विष्णु का दर्शन किया है । पाप रूपी रुई के ढेर के लिए भगवान अग्नि के समान हैं । ४३-४४ दुष्ट राक्षस ने लाकर यहाँ गिरा दिया है । इन्हें यहाँ मैं कैसे रखूँगा । ४५ ऐसा विचार करके उस नागराज ने उन्हें लेकर कूप के मध्य में यत्नपूर्वक रखा । ४६ राक्षस की माया से उनका ज्ञान लुप्त हो गया था । वह कहाँ पर हैं । कुछ भी नहीं समझ पा रहे थे । ४७ प्रभु राम को अन्ध कूप में गिराकर दैत्य फिर पाताल पुरी से बाहर निकला । ४८ मायावी कल्पासुर ने माया कर रखी थी । उसने अपने शरीर को छिपा रखा था । ४९ भरत-शत्रुघ्न के बाणों से शिर कट-कटकर गिर रहे थे । पराक्रमी वानर किसी-किसी को पछाड़कर मार रहे थे । ५० कितने ही विभीषण के बाणों से कटकर

लक्ष लक्ष कोटि कोटि मरन्ति असुर ।
शुणन्ति पार्बती देबी कहन्ति शंकर ।। ५२ ।।
अपूर्व उत्तरकाण्ड बिलंकार बाणी ।
मन देइ शुण हिमवन्तर दूलणी ।। ५३ ।।
सुग्रीव अंगद नळ नील जाम्बवान ।
तरु शिला धरि कोपे करिण गर्ज्जन ।। ५४ ।।
मारन्ति असुर बळ कोटि कोटि रणे ।
मड़ार उपरे मड़ा पड़े अनुक्षणे ।। ५५ ।।
जेते मरुछन्ति तेते आसुछन्ति माड़ि ।
पबनर घाते जेन्हे उठइ लहरी ।। ५६ ।।
असुर मायारे होइछन्ति हत ज्ञान ।
जाणि न पारन्ति केहि ए माया सइन्य ।। ५७ ।।
पाताळकेतु जे आसि मिळिला समरे ।
धनुशर धरि जाइँ भरत आगरे ।। ५८ ।।
माया रथे बसि बोले आरेरे मानबा ।
एहि क्षणि तोते जमघर देखाइबा ।। ५९ ।।
एहा कहि कोटि कोटि बाण बिन्धे सन्धि ।
काटिले भरत तीक्ष्ण तीक्ष्णशर बिन्धि ।। ६० ।।

गिर रहे थे। हनुमान के हाथों से बहुत मर रहे थे। ५१ लाख-लाख करोड़-करोड़ असुर मर रहे थे। पार्वती देवी सुन रही हैं और शंकर जी सुना रहे हैं। ५२ बिलंका के उत्तरकाण्ड की वाणी अपूर्व है। हे हिमांचलकुमारी ! मन लगाकर सुनो। ५३ सुग्रीव, अंगद, नल, नील तथा जामवन्त वृक्ष तथा शिलाओं को लिये हुए क्रोधपूर्वक गर्जन करते हुए संग्राम-भूमि में करोड़ों-करोड़ों असुरदलों को मार रहे थे। प्रतिपल शव के ऊपर शव गिर रहे थे। ५४-५५ जितने मर रहे थे उतने ही ठीक वैसे आते-जाते थे जैसे हवा के आघात से लहरें उठती हैं। ५६ असुर की माया से सभी हत-ज्ञान हो गये थे। कोई समझ नहीं पा रहे थे कि यह माया की सेना है। ५७ पातालकेतु समरांगण में आ पहुँचा। वह धनुष-बाण लेकर माया-रथ पर बैठकर भरत के आगे पहुँचकर बोला, अरे रे ! मानव ! इसी क्षण तुझे यमालय पहुँचा दूँगा। ५८-५९ ऐसा कहकर बाण संधान करके छोड़ने लगा। भरत ने उन्हें तीक्ष्ण बाणों से काट डाला। ६० इस प्रकार दोनों का घोर युद्ध हुआ। भरत ने

एमन्ते से दुर्हिंकर घोर जुद्ध हेला ।
महाकोपे भरत ता धनुकु काटिला ।। ६१ ।।
दश गोटा बाणे तार रथ कला चूना ।
कोपेण दानब करि बहुत भर्त्सना ।। ६२ ।।
परिघ बुलाइ धाइँ आसे महाबळी ।
भरत माइले कोपे बाण ज्वाळाबळि ।। ६३ ।।
दानबर परिघकु कले खण्ड खण्ड ।
देखिण दइत भए हेला लण्ड भण्ड ।। ६४ ।।
ए समये पाञ्च बाण माइले भरत ।
असुर शरीरे पशि पिइले रकत ।। ६५ ।।
तक्षणे पाताळकेतु शूकर होइला ।
भरतर आगे आगे दैत्य पळाइला ।। ६६ ।।
देखि कोपे धनु धरि कैकेयीनन्दन ।
दानबर पच्छे पच्छे करन्ति गमन ।। ६७ ।।
केते बेळे दृश्य पुणि अदृश्य हुअइ ।
असुर रूपरे पुणि पाखकु आसइ ।। ६८ ।।
अस्त्रधरि केते बेळे करइ समर ।
पळाइ जाए से पुणि होइण शूकर ।। ६९ ।।
असुर पच्छकु धरि गोड़ान्ति भरत ।
एमन्ते से जिणि गले बन परबत ।। ७० ।।

अत्यन्त क्रोध से उसके धनुष को काट डाला । ६१ दश बाणों से उसके रथ को चूर-चूर कर दिया । क्रोध से महाबली दानव बहुत निन्दा करते हुए परिघ घुमाते हुए दौड़ आया । भरत ने कुपित होकर ज्वालावली बाण चलाया । ६२-६३ उन्होंने दानव के परिघ को टुकड़े-टुकड़े कर दिया । यह देखकर दैत्य भय से भौचक्का रह गया । ६४ इसी समय भरत ने पाँच बाण मारे जिन्होंने असुर के शरीर में धँसकर रक्त-पान किया । ६५ उसी समय पातालकेतु सुअर बन गया । वह भरत के आगे-आगे भागा । ६६ यह देखकर कैकेयीनन्दन भरत कुपित होकर धनुष लेकर दानव के पीछे-पीछे चले जा रहे थे । ६७ कभी वह दिखाई पड़ता था और कभी छिप जाता था । फिर असुर का रूप धारण करके पास आ जाता था । ६८ कभी अस्त्र लेकर युद्ध करने लगता और फिर सुअर बनकर भाग जाता था । ६९ भरत असुर का पीछा पकड़े खदेड़ रहे थे । इस

बुलाइ बुलाइ नेइ पशिला बिबरे ।
भरतहिँ पशिगले दानब पच्छरे ॥ ७१ ॥
घोर अन्धकार बाट घाट न दिशइ ।
शूकर रूपरे दैत्य गर्जन छाड़इ ॥ ७२ ॥
आरे रे मानबा बोलि देउअछि गाळि ।
शुणि भरत धामन्ति कोपे परज्वळि ॥ ७३ ॥
एमन्ते से भरतंकु नेइ बहु दूर ।
बिष कूपे पकाइला पामर असुर ॥ ७४ ॥
जळ नाहिँ कूप जाक काळकूट बिष ।
पड़िले से कूपे जाइ कैकेयीर शिष ॥ ७५ ॥
गरळ भेदिला दशद्वारकु निरोधि ।
दारुण बिषर ज्वाळा ब्रह्मरन्ध्र भेदि ॥ ७६ ॥
चेता हारि नेला बीर पड़िलेक ढळि ।
देखिण तक्षक नाग राजार दुलाळी ॥ ७७ ॥
पिताकु कहिला जाइँ कालि एक नर ।
आम्भर जे बिषकूप महाभयंकर ॥ ७८ ॥
तहिँरे पड़िछि तार देहे नाहिँ जीब ।
रूपरे ताहाकु सरि नोहिबे गन्धर्ब ॥ ७९ ॥

प्रकार जंगलों व पर्वतों को पार कर गये । ७० घुमाते-घुमाते वह बिवर में घुस गया । दानव के पीछे भरत भी घुस गये । ७१ घने अँधेरे के कारण रास्ता नहीं सूझ रहा था । शूकर के रूप में दैत्य गर्जन कर रहा था । ७२ अरे मानव ! आ ! कहकर वह गाली दे रहा था । यह सुनकर भरत क्रोध से प्रज्वलित होकर दौड़ रहे थे । ७३ इस प्रकार भरत को बहुत दूर ले जाकर उसी नीच असुर ने विष-कूप में गिरा दिया । ७४ उस कुएँ में जल नहीं, सारा विष ही विष था जिसमें कैकेयीनन्दन जा गिरे थे । ७५ दशों द्वारों को रुद्ध करके विष भेद गया । विष की विषम ज्वाला से ब्रह्मरन्ध्र भिद गया था । उनकी चेतना लुप्त हो गई थी । पराक्रमी भरत लुढ़क गये । यह देखकर तक्षक नाग की पुत्री ने जाकर पिता से कहा कि आपने अत्यन्त भयंकर विषकूप में कल से एक व्यक्ति पड़ा है । उसके तन में प्राण नहीं हैं । रूप में उसके समान गन्धर्व भी नहीं होंगे । ७६-७९ वह देवताओं से भी अधिक सुन्दर है ।

देबतांक ठारु सेहि अधिक सुन्दर ।
करे धनु बेनि कन्धे झूलइ तूणीर ।। ८० ।।
दुहितार मुखुं शुणि एमन्त अद्भुत ।
बोइला लो असम्भब कथा कहु तुन ।। ८१ ।।
जे वारुण बिषकूपे न पशइ जम ।
बासबकु अगोचर ए गुपत स्थान ।। ८२ ।।
एमन्त कहि तुरिते अइला से धाइँ ।
भरतकु चाहिँला से खण्डे दूरे थाइँ ।। ८३ ।।
बिराजइ देव चिन्ह मान तार अंगे ।
देखिण से नागराज बेसिलाक जोगे ।। ८४ ।।
जोग बळे जाणिले ए दशरथ सुत ।
श्रीबिष्णु देबंक अंशे होइअछि जात ।। ८५ ।।
चाण्डाळ पाताळकेतु मायाबळे आणि ।
बिष कूपे पकाइण गला एहि क्षणि ।। ८६ ।।
एहांकु जेबे मुँ पुरे न रखिबि नेइ ।
मोहर जीबन आसि नेब खग साइँ ।। ८७ ।।
आम्भ पाइँ सिना बिष्णु पाउछन्ति कष्ट ।
ए मले अमर हेब पामर दर्पिष्ठ ।। ८८ ।।
एमन्त भाळि जे नेला भरतकु पुरे ।
रखिला जतन करि आपणा मन्दिरे ।। ८९ ।।

उसके हाथ में धनुष है तथा दोनों कन्धों पर तरकश झूल रहे हैं। ८० बेटी के मुख से इस प्रकार आश्चर्ययुक्त बात सुनकर उसने कहा कि तू तो असम्भव बात कह रही है। ८१ जिस विषम कूप में यमराज भी नहीं घुसता तथा यह स्थान इन्द्र के लिए भी गुप्त है। ८२ ऐसा कहकर वह तुरन्त दौड़कर आया और उसने थोड़ी दूर रहकर भरत को देखा। ८३ उनके अंग में देवचिह्न विराजित थे। उस नागराज ने योगबल से जानकर कहा कि यह दशरथ के पुत्र श्रीनारायण के अंश से उत्पन्न हुए हैं। ८४-८५ चाण्डाल पातालकेतु ने माया के बल से इन्हें लाकर अभी विषकूप में गिरा दिया है। यदि मैं इन्हें लेकर नहीं रखूंगा तो पक्षिराज गरुड़ आकर मेरे प्राण ले लेंगे। ८६-८७ हमारे लिए ही तो विष्णु भगवान कष्ट उठा रहे हैं। इनके मरने से तो नीच घमण्डी (दानव) अमर हो जाएगा। ८८ इस प्रकार सोचकर वह भरत को

एथु अनन्तरे तु गो शुण भगवती ।
पुणि से पाताळपुरु आसिण दुर्मति ॥ ९० ॥
माया रथे बसि करे धरि धनुशर ।
शत्रुघन मुख चाहिँ बोले रे पामर ॥ ९१ ॥
बिना दोषे कह किम्पा आम्भ पुरे पशि ।
मारुअछ असुरंकु बार बार आसि ॥ ९२ ॥
आम्भे कि तुम्भर बाड़ि बृत्ति नेलु हरि ।
एहि क्षणि पठाइबि तोते जमपुरी ॥ ९३ ॥
तोते मारि मारिबि तो ज्येष्ठ सहोदर ।
पृथिबीरे न थोइबि गोटिए बानर ॥ ९४ ॥
तिनिपुरे आजि किए देखिबा रखिब ।
जे पड़िब मो आगे से जमपुर जिब ॥ ९५ ॥
एमन्त कहि दानव करइ गर्ज्जन ।
बोइलेक दानबंकु चाहिँ शत्रुघन ॥ ९६ ॥
काहिँ पाइँ गरजुछु पुरिलाणि काळ ।
तुम्भे मले सुखी हेबे दश दिगपाळ ॥ ९७ ॥
आम्भ स्वर्गपुर किम्पा नेल तुम्भे बळे ।
आम्भ दइतारि बाना उड़े काळे काळे ॥ ९८ ॥

नगर में ले गया और उसने उन्हें अपने महल में यत्नपूर्वक रखा । ८९
हे भगवती ! इसके बाद सुनो ! फिर वह दुर्बुद्धि पातालपुर से आकर
माया के रथ में बैठकर धनुष-बाण उठाकर शत्रुघ्न के मुख की ओर
देखते हुए कहने लगा, अरे नीच ! बिना अपराध के ही हमारे नगर में
घुसकर बार-बार आकर असुरों को क्यों मार रहा है ? ९०-९२ हमने
क्या तुम्हारी बड़ी भारी जीविका हर ली है ? इसी क्षण तुझे यमपुरी
भेज दूँगा । ९३ तुझे मारकर तेरे बड़े भाई को मारूँगा । पृथ्वी पर
एक भी वानर को नहीं छोड़ूँगा । ९४ आज देखता हूँ कि तीनों लोकों में
कौन रक्षा करेगा ? जो मेरे सामने पड़ेगा वह ही यमपुरी को जाएगा । ९५
ऐसा कहकर दानव गर्जन करने लगा, तब दानव की ओर ताककर शत्रुघ्न
ने कहा । ९६ अरे किसलिए गरज रहा है ? तेरा समय पूरा हो चुका ।
तुम्हारे मरने पर दश दिग्पाल सुखी हो जायेंगे । ९७ तुमने बलपूर्वक हमारे
स्वर्गलोक को क्यों ले लिया ? हमारा दैत्यों के शत्रु का झंडा युग-युग से
उड़ता चला आ रहा है । ९८ पृथ्वी पर मैं एक भी असुर नहीं छोड़ूँगा ।

न थोइबु पृथिबीरे गोटिए असुर ।
खोजि खोजि पठाइबु शमन मन्दिर ॥ ९९ ॥
एमन्त कहि धनुरे नाराच जोचिले ।
असुर हस्तरु धनु काटि पकाइले ॥ १०० ॥
आन धनु धरि कोपे दैत्य दुराचारी ।
सहस्रे नाराच देला एका बेळे मारि ॥ १०१ ॥
दशबाणे शत्रुघ्न ता कले निबारण ।
एमन्ते घड़िक जाए दुहिँकर रण ॥ १०२ ॥
दुहेँ दुहिँकर बाण निबारन्ति शरे ।
माइला असुर बाण दैत्य कोप भरे ॥ १०३ ॥
बाजिला से बाण जाइ शत्रुघ्न ललाटे ।
काळसर्प लांगुड़रे पिटि देले छाटे ॥ १०४ ॥
जेसन गर्जन करि फणा दिए टेकि ।
तेसन गरजि कोपे शत्रुघ्न धानुकी ॥ १०५ ॥
एक बाणे दानबर भांगि देले रथ ।
चारि बाणे दानबकु कले जर्जरित ॥ १०६ ॥
पाञ्च बाजे धनु त्रोण काटिले ताहार ।
भयरे पाताळकेतु होइला शूकर ॥ १०७ ॥

उन्हें खोज-खोजकर यमालय भेज दूँगा । ९९ ऐसा कहकर उन्होंने धनुष पर बाण चढ़ाया और असुर के हाथ के धनुष को काट डाला । १०० दुराचारी दैत्य ने अन्य धनुष को उठाकर क्रोधित होकर एक साथ ही एक हजार बाण छोड़ दिये । १०१ शत्रुघ्न ने दश बाणों से उन्हें नष्ट कर दिया । इस प्रकार एक घड़ी तक दोनों का संग्राम चलता रहा । १०२ दोनों ही बाणों से दोनों के बाण नष्ट कर रहे थे । दैत्य ने कुपित होकर असुर-बाण का प्रहार किया । वह बाण जाकर शत्रुघ्न के मस्तक पर लगा । जिस प्रकार लाठी से कालसर्प की पूंछ पर आघात करने से फुफकार मारकर वह फन उठा देता है, उसी प्रकार क्रोध से गर्जन करते हुए धनुर्धारी शत्रुघ्न ने एक बाण से दानव के रथ को नष्ट कर दिया और चार बाणों से उसे जर्जर कर दिया । १०३-१०६ उन्होंने पाँच बाणों से उसके धनुष तथा तूणीर को काट दिया । भय के कारण पातालकेतु सुअर बन गया । १०७ वह शत्रुघ्न के आगे-आगे भागकर जाने लगा ।

शत्रुघन आगे आगे गलाक पळाइ ।
असुरकु शत्रुघन गलेक गोड़ाइ ।। १०८ ।।
बने जेन्हे मृग पच्छे धाइँ थाए ब्याध ।
न मानइ तरु लता गिरि कण्टाबन्ध ।। १०९ ।।
तेसन धामन्ति पच्छे पच्छे शत्रुघन ।
शूकर रूपरे दैत्य करइ गमन ।। ११० ।।
पशिला से बेगे जाइँ पाताळ बिबरे ।
शत्रुघन पशि गले ताहार पच्छरे ।। १११ ।।
घोर अन्धकार पथ किछि न दिशइ ।
तर्जन गर्जन करि असुर ड़ाकइ ।। ११२ ।।
आरे रे मानब आजि काटिबि तो शिर ।
दानब शबद बारि गले तहुँ बीर ।। ११३ ।।
किछि दूरे ज्योतिर्मय पुरकु देखिले ।
असुर केणिकि गला खोजि न पाइले ।। ११४ ।।
मने बिचारिले दैत्य अछइ ए पुरे ।
एते भाळि शत्रुघन पशिले भितरे ।। ११५ ।।
देखिले से पुर गोटा दिशइ उज्ज्वळ ।
शोभारे से निन्दुअछि गगन मण्डळ ।। ११६ ।।

शत्रुघ्न असुर को खदेड़ते चल पड़े । १०८ जैसे जंगल में मृग के पीछे बहेलिया दौड़ता है । वह पर्वत, वृक्ष, लता तथा काँटों की बाड़ पर ध्यान नहीं देता । उसी प्रकार शत्रुघ्न पीछे-पीछे दौड़ रहे थे। दैत्य शूकर के रूप में जा रहा था । १०९-११० वह शीघ्र ही जाकर पाताल-विवर में घुसा । उसके पीछे शत्रुघ्न भी घुस गये । १११ घने अन्धकार में रास्ता आदि कुछ भी नहीं दिख रहा था। गर्जन-तर्जन करते हुए दैत्य दहाड़ रहा था । ११२ अरे मानव ! आ ! आज तेरा शिर काट डालूँगा । वीर शत्रुघ्न दानव के शब्द की आहट पर वहाँ पहुँच गये । ११३ कुछ दूरी पर उन्होंने प्रकाशयुक्त एक महल देखा । असुर कहाँ चला गया उसे खोज नहीं पाये । ११४ मन में उन्होंने विचार किया कि दैत्य इसी महल में होगा । ऐसा सोचकर वह उसके भीतर घुसे । ११५ उन्होंने देखा कि वह सम्पूर्ण महल उज्ज्वल दिखाई दे रहा था । वह सौन्दर्य से आकाश-मण्डल की निन्दा कर रहा था । ११६ हीरा, नीलम, वैदूर्य, प्रवाल,

हीरा नीळा बइडूर्य्य प्रबाळ कांचन ।
गोमेध रजत मोती माणिक्य रतन ॥ ११७ ॥
बिराजन्ति गगनर तारा ठारु झलि ।
बसि अछइ से पुर मध्ये एक बाळी ॥ ११८ ॥
कोटि चन्द्र नोहिब ता बदनकु सरि ।
गण्डे हस्त देइ दुःखे बसिछि सुन्दरी ॥ ११९ ॥
नयन कमळ ठारु अधिक सुन्दर ।
दशन पन्ति कि तार मूकुतार हार ॥ १२० ॥
धीरे धीरे झुलुअछि नासामणि गोटि ।
बधुली अधरी सेहि बाळा बिम्बओष्ठी ॥ १२१ ॥
अष्ट रतनहार पड़िअछि उरे ।
अनुपम रूप तार नाहिँ तिनिपुरे ॥ १२२ ॥
साक्षाते से हेमलता अटइ सुन्दरी ।
शत्रुघ्न ताहाकु देखि मनरे बिचारि ॥ १२३ ॥
असुर त नाहिँ एथे ए काहार पुर ।
केबण देबीर अबा अटइ मन्दिर ॥ १२४ ॥
एक मात्र अछि एहि पुरे ए सुन्दरी ।
नागकन्या किबा स्वर्गपुरु अपसरी ॥ १२५ ॥

काञ्चन, गोमेद, चाँदी, मोती, माणिक्य तथा रत्न आकाश के नक्षत्रों से भी अधिक दमक रहे थे। उस महल के बीच में एक स्त्री बैठी थी। ११७-११८ उसके मुख की समता करोड़ चन्द्रमा से भी नहीं हो पाती थी। वह सुन्दरी गण्डस्थल पर हाथ रखे हुए दुखी बैठी थी। ११९ कमलस्वरूपी नेत्रों से भी अधिक सुन्दर मुक्ताहार की भाँति उसकी दन्त-पंक्ति थी। १२० उस बधूली, अधर तथा बिम्बाफल जैसे ओंठों वाली सुन्दरी की नाक में एक बुलाक धीरे-धीरे झूल रही थी। १२१ अष्टरत्नों का हार वक्षस्थल पर पड़ा था। उसका जैसा अनुपम रूप तीनों लोकों में नहीं था। १२२ वह सुन्दरी साक्षात् कनकलता थी। उसे देखकर शत्रुघ्न मन में विचार करने लगे। १२३ असुर तो यहाँ नहीं है फिर यह किसका महल है? क्या यह किसी देवी का मन्दिर है। १२४ इस महल में एक मात्र यही सुन्दरी है। यह नागकन्या है अथवा स्वर्ग की अप्सरा है। १२५ एकान्त में इससे कैसे बातचीत करें। और यदि

केमन्ते एहाकु कथा कहिबि एकान्ते ।
न कहिले आउ केहि नाहान्ति त एथे ॥ १२६ ॥
एते भाळि पचारिले कह गो सुन्दरी ।
काहार दुहिता तुम्भे काहा गो नारी ॥ १२७ ॥
ए सुन्दरपुर गोटि अटइ काहार ।
क्षुधा तृषा हरइ ए अपूर्व मन्दिर ॥ १२८ ॥
देवीकि दानवी तुम्भे मानवी कि कह ।
मुहिँ त शत्रुघ्न दशरथ राजा पुअ ॥ १२९ ॥
श्री रामंक सानभाइ थिलि बिलंकारे ।
जुझि थिलि मुँ पाताळकेतु संगतरे ॥ १३० ॥
शूकर रूपरे सेहि पळाइ अइला ।
ए पुरे पशिला दैत्य तहुँ केणे गला ॥ १३१ ॥
जाणि थिले कह मोते अनुग्रह करि ।
धीरे धीरे कहे पिकभाषी से सुन्दरी ॥ १३२ ॥
आहे राजपुत्र शुण मोहर जे दुःख ।
शुणिले नयन नीरे तिन्ताइब मुख ॥ १३३ ॥
मुहिँ जे गन्धर्व कन्या नाम रत्नाबती ।
बिश्वाबसु गन्धर्व जे मोर निजपति ॥ १३४ ॥
मायावी पाताळकेतु जाणे केते माया ।
चाण्डाळ दानव चित्ते नाहिँ टिके दया ॥ १३५ ॥

नहीं भी करते हैं तो अन्य कोई यहाँ पर है भी नहीं । १२६ ऐसा सोचकर उन्होंने पूछा, हे सुन्दरी ! तुम किसकी पुत्री तथा किसकी स्त्री हो ? १२७ यह सुन्दर महल किसका है ? यह महल अपूर्व है और भूख-प्यास को हरण करनेवाला है । १२८ तुम देवी, दानवी अथवा मानवी कौन हो ? यह बताओ । मैं तो राजा दशरथ का पुत्र शत्रुघ्न हूँ । १२९ श्रीराम का अनुज मैं बिलका में पातालकेतु के साथ संग्राम कर रहा था । १३० वह शूकर के रूप में भाग आया है । वह दैत्य इसी महल में घुसकर कहीं चला गया । १३१ यदि तुम्हें ज्ञात हो तो दया करके बता दो । तब वह कोकिलबयनी सुन्दरी धीरे-धीरे बोली । १३२ हे राजपुत्र ! हमारे दुःख को सुनो । सुनने से तुम्हारा मुख आँख के आँसुओं से भीग जायेगा । १३३ मैं गन्धर्व-कन्या हूँ । मेरा नाम रत्नावती है । विश्वावसु गन्धर्व मेरा अपना पति है । १३४ मायावी

ताहार मायारे केहि न पारिले पशि ।
इन्द्र आदि देबतांकु जिणिला से दोषी ॥ १३६ ॥
मायाधर बिष्णु जिणि पारइ मायारे ।
रहिथाइ से दानब ए पाताळपुरे ॥ १३७ ॥
धइले शूकर रूप मोहिन संसार ।
पड़ि जिबे तार माया जाले ब्रह्मा हर ॥ १३८ ॥
कि कहिबि माया बळे हरि आणि मोते ।
रखिअछि एहि ठारे अष्टमी पर्य्यन्ते ॥ १३९ ॥
आजकु अछइ आउ पन्दर दिवस ।
बळात्कारे मोते धरि हरिब राक्षस ॥ १४० ॥
भण्डाइ मुँ दानबकु रखिछि महत ।
कहिछि अछइ मोर एक माग ब्रत ॥ १४१ ॥
तेणु मोर सतीपण अछि आहे बीर ।
पन्दर दिबस हेला आणिला असुर ॥ १४२ ॥
प्राण रखि न थान्ति मुँ कहु अछि सत ।
नारद मुनिक जोगुँ अछि मुँ जीबित ॥ १४३ ॥
से आसि दिने मो पाशे कहिले एकान्ते ।
आगो रत्नाबती प्राण रख दिना केते ॥ १४४ ॥

पातालकेतु कितनी ही माया जानता है। वह दानव चाण्डाल है। उसके हृदय में थोड़ी भी दया नहीं है। १३५ उसकी माया किसी के लिए भी अगम्य है। उस दुष्ट ने इन्द्र आदि देवताओं को भी जीत लिया है। १३६ मायाधारी विष्णु ही माया से उसे जीत सकते हैं। वह दानव इसी पातालपुर में रहता है। १३७ उसके शूकर-रूप धरने से संसार मोहित हो जाता है। उसकी माया के फन्दे में शंकर और ब्रह्मा भी पड़ जाते हैं। १३८ मैं क्या कहूँ। वह मुझे माया के बल से हर कर ले आया और उसने हमें अष्टमी तक यहाँ रखा है। १३९ आज से और पन्द्रह दिन शेष हैं। फिर राक्षस बलात्कार से मेरा शील हरण कर लेगा। १४० मैंने दानव को बहुत बहला रखा है। मैंने कहा है कि मेरा एक माह का व्रत है। १४१ हे वीर! इसी से मेरा सतीत्व अभी तक बचा है। असुर को मुझे लाये हुए पन्द्रह दिन हो गये। १४२ मैं सत्य ही कह रही हूँ कि मैं जीवित न रहती। परन्तु नारद मुनि के कारण मैं जीवित हूँ। १४३ उन्होंने एक दिन एकान्त में मेरे निकट आकर कहा कि हे रत्नावती! कुछ दिन प्राणधारण करो। मायावी

मरिब अळप दिने मायाबी असुर ।
सबशे मारिबे ताकु राम रघुबीर ॥ १४५ ॥
जे दिन भेटिबु तुहि श्रीरामंक भाइ ।
जतने ए पुर मध्ये थिबु तांकु थोइ ॥ १४६ ॥
केहि न देखिबे ताकु आणिबु गुपते ।
न जाणन्ति जगि थिबा असुरी जेमन्ते ॥ १४७ ॥
दानवर मायामय पुर एहि जाण ।
एथे पशि न पारइ केभे जन्तु राण ॥ १४८ ॥
इन्द्र चन्द्र बरुण वा कुबेर पबन ।
ब्रह्मा बिष्णु महेश्वर सूर्य्य हुताशन ॥ १४९ ॥
एहि क्षणि देखु अछ न देखिब एथे ।
चाहुँ चाहुँ अदृश्य ए हेब दृष्टि पथे ॥ १५० ॥
अद्भुत माया जाणइ दुर्द्दान्त दानब ।
पशिले कदापि एथु बाहारि न जिब ॥ १५१ ॥
बळे अबा जिबा पाइँ करिब जे मन ।
माया जाल ता पादकु करिब बन्धन ॥ १५२ ॥
जाइ न पारिब सेहि रहिब ए पुरे ।
मरिब से जाणु दुष्ट दानब हम्तरे ॥ १५३ ॥

असुर कुछ दिनों में मर जायेगा । रघुकुल के पराक्रमी राम वंश-सहित उसका संहार करेंगे । १४४-१४५ जिस दिन श्रीराम के भाई से तुम्हारी भेंट हो तो तुम उन्हें यत्नपूर्वक महल में रखना । १४६ उन्हें गुप्त रूप से ले आना । कोई देख न पाये । जो दैत्यबालायें पहरे पर हैं वह भी न जान पायें । १४७ समझ लो कि दानव का यह महल माया से पूर्ण है । यहाँ यम भी कभी प्रविष्ट नहीं हो सकता । १४८ इन्द्र, चन्द्रमा अथवा वरुण, कुबेर, ब्रह्मा, विष्णु, महेश, सूर्य, अग्नि भी प्रविष्ट नहीं हो सकते । १४९ यहाँ जो भी अभी देख रहे हो वह नहीं दिखाई पड़ेगा । देखते-देखते यह दृष्टि से ओझल हो जायेगा । १५० दुर्दान्त दानव विचित्र माया जानता है । इसमे घुस जाने पर कभी भी इसके बाहर नहीं जाया जा सकता । १५१ जो कोई बलपूर्वक यहाँ से जाने की चेष्टा करेगा उसके पैर माया के फन्दे से जकड़ जाएँगे । १५२ वह जा नहीं सकेगा । इसी महल में रह जाएगा तथा दुष्ट दानव के हाथों मारा जाएगा । १५३ अभी हमारा कहना मानकर छिपकर रह जाओ,

एबे मोर बोल मानि रहिथा गुपते ।
चण्डाळ असुर गोटा मरिबा पर्य्यन्ते ॥ १५४ ॥
शत्रुघन ता कथारे कले सनमत ।
पुर मध्ये कला ताकु गन्धर्व्वी गुपत ॥ १५५ ॥
एथु अनन्तरे तु गो गिरि जेमा शुण ।
पाताळकेतु पाताळपुरु गला पुण ॥ १५६ ॥
देखिला सुग्रीव राजा करइ समर ।
ताहार आगरे जाइँ मिळिला पामर ॥ १५७ ॥
धनुधरि बाण बृष्टि कला ता उपरे ।
जेसने श्रावण मासे मेघ वृष्टि करे ॥ १५८ ॥
ता देखि वानरराज कोपे गुरुतर ।
पादे भांगि देला मायारथ गोटा तार ॥ १५९ ॥
असुर हातरु धनु छड़ाइ आणिला ।
बेनि खण्ड करि ताकु भांगि पकाइला ॥ १६० ॥
चापोड़े माइला कोपे असुर गालरे ।
ता आगे शूकर रूप धइला सत्वरे ॥ १६१ ॥
आगे आगे पळाइला सुग्रीव ता देखि ।
पच्छे पच्छे गोड़ाइला समर उपेछि ॥ १६२ ॥

जब तक चाण्डाल दैत्य का निधन नहीं हो जाता । १५४ शत्रुघ्न ने उसकी बातों को स्वीकार कर लिया । गन्धर्व-बाला ने उन्हें महल में छिपा दिया । १५५ हे गिरिपुत्री ! इसके पश्चात् सुनो । पातालकेतु पाताल्पुरी पुनः चला गया । १५६ उसने राजा सुग्रीव को युद्ध करते देखा । नीच दैत्य उनके सामने जा पहुँचा । १५७ उसने धनुष उठाकर जैसे सावन के महीने में बादल बरसते हैं वैसे ही उन पर बाणों की वर्षा की । १५८ यह देखकर वानरराज ने अत्यन्त क्रोध करते हुए उसके समूचे मायारथ को अपने पैरों से नष्ट कर दिया । १५९ वह असुर के हाथों से धनुष छीन लाया और उसके दो भाग करके तोड़कर फेंक दिया । १६० उसने क्रोध से असुर के गाल पर एक थप्पड़ मारा । उसने उनके ही सामने शीघ्र ही सुअर का रूप धारण कर लिया । १६१ आगे-आगे वह भागने लगा । सुग्रीव ने यह देखकर युद्ध की उपेक्षा करके उसे पीछे-पीछे लगकर खदेड़ा । १६२ कपि सुग्रीव जितने वेग से जा रहा था उससे दोगुनी

जेते वेग होइ जाए सुग्रीव बानर ।
तहिँरु द्विगुण बेगे धामइँ असुर ॥ १६३ ॥
पशिला पाताळपुर बिबरे से जाइँ ।
कपिराज गला तार पच्छे धाइँ धाइँ ॥ १६४ ॥
घोर अन्धकार तहिँ न दिशइ बाट ।
असुर गर्जन करि बोले रे मर्कट ॥ १६५ ॥
मरिबु एथर तोर पूरिलाणि काळ ।
जमराज धइलाणि हस्ते तोर बाळ ॥ १६६ ॥
असुर शबद बारि धामइँ सुग्रीव ।
तप्त कूपे पकाइला दुरन्त दानव ॥ १६७ ॥
सूर्य्य देबंकर तेज अछि सेहि कूपे ।
सुग्रीव पड़िला डेइँ जाइँ आपे आपे ॥ १६८ ॥
असुर मायाकू सेहि जाणि न पारिला ।
तप्त कूप मध्ये पड़ि बुड़ि बुड़ि गला ॥ १६९ ॥
सहस्र जोजन जाण से कूप गभीर ।
ताति जाइ फुटुथाइ जळ निरन्तर ॥ १७० ॥
पार्बती बोइले देवदेव शूलपाणि ।
एकथा गोटिक असम्भव प्राय मणि ॥ १७१ ॥
केमन्ते रहिला तहिँ सूर्य्य तेज जाइँ ।
तप्त कूप नाम तार हेला काहिँ पाइँ ॥ १७२ ॥

तेजी से असुर दौड़ रहा था । १६३ वह जाकर पातालपुरी के बिबर में घुसा । वानरराज सुग्रीव भी उसके पीछे दौड़ते-दौड़ते वहीं जा घुसा । १६४ वहाँ घना अँधेरा था । मार्ग दिखाई नहीं दे रहा था । दैत्य गर्जन करते हुए कह रहा था कि अरे बन्दर ! इस बार तू मरेगा ! तेरा समय पूरा हो गया है । यमराज ने तेरे बाल हाथों से पकड़ लिये हैं । १६५-१६६ असुर के शब्द पर ही सुग्रीव दौड़ रहे थे । दुर्धर्ष दानव ने उन्हें तप्त कूप में ले गिराया । १६७ उस कुएँ में सूर्यदेव का तेज था । जहाँ उछलते-उछलते सुग्रीव अपने आप जा गिरे । १६८ वह राक्षस की माया को समझ नहीं पाये । तप्तकूप में गिरकर वह डूबने लगे । १६९ वह कूप एक हजार योजन गहरा था । उसका पानी सदा उबलता रहता था । १७० पार्वती जी बोलीं, हे देवाधिदेव शूल-पाणि ! यह बात तो असम्भव जैसी लग रही है । १७१ सूर्य का तेज

शंकर बोइले पूर्बे आदित्य देबता ।
तेज न सहिला विश्वकर्मार दुहिता ॥ १७३ ॥
छाया नामे दासी तार थिला गो पार्बती ।
ताहाकु आपणा रूप देइ महासती । १७४ ॥
पिता घरे रहि बार जाणि दिवाकर ।
संज्ञाकु जाइ बुझाइ कहिले अपार ॥ १७५ ॥
से बोइले तुम्भ तेज न पारउ सहि ।
तेणु नाथ पिता घरे लुचिअछि रहि ॥ १७६ ॥
भारिजार मुखुँ शुणि एमन्त बचन ।
आपणार तेज क्षय कलेक तापन ॥ १७७ ॥
पकाइ दिअन्ते फुटि पाताळकु गला ।
सेहि दिनु तप्तकूब नाम तार हेला ॥ १७८ ॥
फूटि थाइ सबु बेळे से कूपर पाणि ।
तहिंरे बुड़न्ते ताहा दिनकर जाणि ॥ १७९ ॥
पुत्र ठारे स्नेह रखि हरि नेले तेज ।
शीतळ जोगुँ न मला तहिं कपिराज ॥ १८० ॥
सूर्य्यङ्क आज्ञारे मणि नाग नेला हरि ।
रखिला ताहाकु पुरे अति जत्न करि ॥ १८१ ॥

वहाँ पर जाकर कैसे रह गया ? उसका नाम तप्तकूप किस कारण से पड़ा ? १७२ शंकर जी ने कहा कि प्राचीन समय में विश्वकर्मा की पुत्री सूर्य का तेज नहीं सहन कर पाई । १७३ हे पार्वती ! उसकी छाया नाम की एक दासी थी । वह महान सती उसे (दासी को) अपना रूप देकर पिता के घर पर रह रही है । यह सूर्य को पता चल गया । उन्होंने जाकर संज्ञा को अनेक प्रकार से समझाया । १७४-१७५ उसने कहा कि मैं आपके तेज को सहन न कर पाने के कारण पिता के घर पर छिपकर रह रही हूँ । १७६ पत्नी के मुख से ऐसे वचनों को सुनकर सूर्य ने अपने को तेज को क्षीण कर लिया । १७७ उसे फेंकने से वह तेज भेद कर पाताल चला गया । उसी दिन से उसका नाम तप्तकूप पड़ गया । १७८ उस कुएँ का जल निरन्तर उबलता रहता था । वहीं पर सुग्रीव को डूबते हुए जानकर सूर्य ने पुत्र से प्रेम रखने के कारण तेज का हरण कर लिया । जल ठण्डा हो जाने से कपिराज सुग्रीव वहाँ नहीं मरे । १७९-१८० सूर्य की आज्ञा से मणि नाग ने उन्हें ले जाकर अपने भवन में बड़े यत्न के साथ

एथु अनन्तरे तु गो शुण हैमवति ।
बिभीषण जाउँ जाउँ भेटिला मारुति ।। १८२ ।।
बोइला रामंकु तुहि देखिछु कि रणे ।
हनु बोइला मू देखि नाहिँ गले केणे ।। १८३ ।।
बिभीषण बोइला ए माया प्राय लागे ।
सम्भाळि समर बाबु कर तांक संगे ।। १८४ ।।
एमन्त बेळे मिळिला प्रतापी असुर ।
कळपासुरकु कहे सर्व समाचार ।। १८५ ।।
जाणि लाणि बिभीषण आम्भ माया जाक ।
एहांकु माइले जिब आम्भर कलंक ।। १८६ ।।
ए षडबीरंकु बाणे पकाइबा मारि ।
बळहीन होइलाणि जुद्ध करि करि ।। १८७ ।।
एमन्त बिचारि दुहेँ धरि धनु शर ।
बिभीषण संगे कले बिचित्र समर ।। १८८ ।।
कोटि कोटि लक्ष लक्ष माइलेक बाण ।
काटि न पारिला प्रति शरे बिभीषण ।। १८९ ।।
पड़ुछन्ति बाणे आसि बज्र सम जाणि ।
कातर होइला बेळुँ बेळ बीरमणि ।। १९० ।।

रखा । १८१ हे हिमांचलकुमारी ! इसके पश्चात् सुनो ! जाते-जाते विभीषण की भेंट हनुमान से हो गई । १८२ उन्होंने कहा कि ... तुमने युद्ध में श्रीरामचन्द्र जी को देखा है । हनुमान ने उत्तर दिया कि मैंने नहीं देखा । न जाने वह कहाँ चले गये ? १८३ विभीषण ने कहा कि यह तो माया जैसी लगती है । हे तात ! उनके साथ सम्हलकर युद्ध करो । १८४ इसी समय वह प्रतापी दैत्य आ पहुँचा । उसने कल्पासुर से सारे हाल-चाल कह दिये । १८५ विभीषण हम लोगों की सारी माया को जान गया है । इन लोगों को मार देने से हम लोगों का कलंक हट जायेगा । १८६ इन छः वीरों को बाण से मार गिराएँगे । यह युद्ध करते-करते बलहीन हो गये हैं अर्थात् थक चुके हैं । १८७ ऐसा विचार कर दोनों धनुष-बाण लेकर विभीषण के साथ विचित्र संग्राम करने लगे । १८८ उन्होंने करोड़ों-लाखों बाण मारे । विभीषण उन्हें बदले में काट नहीं पाये । १८९ वज्र के समान आकर गिर रहे बाणों से वीर श्रेष्ठ धीरे-धीरे अधीर हो गया । १९० वह धनुष को पकड़े नहीं रह

धनुधरि न पारिला भूमिरे पड़िला ।
बिषम आघात पाइ चेता हृजि गला ॥ १९१ ॥
बिभीषण पड़िबार देखि दुइ बीरे ।
बाण बृष्टि कले कोपे अंगद अंगरे ॥ १९२ ॥
जूझि जूझि अशकत होइलाणि बीर ।
बाणर आघात पाइ कम्पिला शरीर ॥ १९३ ॥
पड़िला भूमिरे ढ़ळि तारार नन्दन ।
ताहा देखि नळ नीळ मन्त्री जाम्बवान ॥ १९४ ॥
गिरि बृक्ष हस्ते धरि कले जाइ रण ।
बिधन्ति से बेनि बीरे तीक्ष्ण तीक्ष्ण बाण ॥ १९५ ॥
गिरि बृक्ष काटि तांक शिर देले छाइ ।
एका बेळे तीनि बीरे चेतना हराइ ॥ १९६ ॥
भूमिरे पड़िले ताहा देखि हनुमान ।
बिचारिला काहिँ गले कमळलोचन ॥ १९७ ॥
भरत शत्रुघ्न दुहेँ काहिँ गले पुणि ।
काहिँ गला सुग्रीव हे कपिकुळ मणि ॥ १९८ ॥
मुहिँ त अछइ एका मलेणि समस्ते ।
मूँ मले बारता सीता पाइबे केमन्ते ॥ १९९ ॥

सका और पृथ्वी पर गिर पड़ा । कठोर आघात से उसकी चेतना लुप्त हो गई । १९१ बिभीषण को गिरा देखकर दोनों वीरों ने अंगद के शरीर पर क्रोधित होकर बाणों की वर्षा की । १९२ पराक्रमी अंगद युद्ध करते-करते अशक्त हो गया । बाण की चोट से उसका शरीर काँप गया । १९३ तारा-पुत्र अंगद पृथ्वी पर लुढ़क गया । उसे देखकर नल-नील तथा मंत्री जामवन्त ने जाकर वृक्ष और पर्वत हाथों में लेकर युद्ध किया । वह दोनों पराक्रमी (दानव) नुकीले बाण छोड़ रहे थे । १९४-१९५ पर्वत और वृक्षों को काटकर उन्होंने उनके शिर आच्छादित कर दिये । एक साथ ही तीनों वीर मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़े । यह देखकर हनुमान सोचने लगे कि राजीवलोचन (श्रीराम) कहाँ चले गये ? १९६-१९७ फिर भरत और शत्रुघ्न कहाँ गये ? वानर-कुलश्रेष्ठ सुग्रीव भी कहाँ गया ? १९८ सभी मर गये । मैं ही अकेला रह गया हूँ । मेरे मर जाने से सीता जी को समाचार कैसे मिलेगा ? १९९ मेरा युद्ध करना उचित नहीं है । ऐसा विचार कर

जुद्ध करिबार मोर नुहइ उचित ।
एमन्त बिचारि तहुँ बीर हनुमन्त ॥ २०० ॥
क्षुद्र रूप धरि जाइँ उठिला पबते ।
बसिला पर्बत शिख बृक्षर अग्रते ॥ २०१ ॥
समर भूमिकि दृष्टि देला बीरमणि ।
दुइ बिना तिनि जण नाहिँ तहिँ पुणि ॥ २०२ ॥
रुधिर मड़ार किछि नाहिं चिन्ह बर्ण ।
रथ रथी गज अश्व पदाति सइन ॥ २०३ ॥
किछि नाहिँ दुइ गोटा असुर केबळ ।
देखि आचम्बित होइ पबन दुलाळ ॥ २०४ ॥
कपाळरे कर मारि बोलेरे दइब ।
माया जुद्ध कले आसि से दुइ दानब ॥ २०५ ॥
कि बुद्धि करिबि राम गले काहिँ पुणि ।
शत्रुघन भरत जे कपिकुळमणि ॥ २०६ ॥
ए चारिक चिन्ह बर्ण न मिलइ तहिँ ।
असुरंक माया बूझि न पारिलु केहि ॥ २०७ ॥
शुण गो पार्बती देवी बोलन्ति शंकर ।
कळपा पाताळकेतु ए बेनि [illegible]म्बर ॥ २०८ ॥
रण भुइँरु सानन्द होइ चळिगले ।
लक्षशिरा दानबर छामुरे मिळिले ॥ २०९ ॥

पराक्रमी हनुमान छोटा रूप धारण करके वहाँ से जाकर पर्वत के ऊपर चढ़ गये और पर्वत के शिखर के वृक्ष के ऊपरी भाग पर बैठ गये। २००-२०१ वीरश्रेष्ठ ने समरांगण की ओर दृष्टिपात किया। वहाँ पर दोनों के सिवाय तीसरा कोई नहीं था। २०२ रक्त एवं शवों का नाम-निशान तक नहीं था। रथ, रथी, पैदल, सिपाही, घोड़े कुछ भी नहीं थे। केवल दोनों दैत्य थे। यह देखकर पवननन्दन ने अचम्भे में पड़कर हाथों से मस्तक ठोंकते हुए कहा, अरे दैव ! दोनों असुरों ने आकर माया-युद्ध किया है। २०३-२०५ क्या उपाय करूँ ? जाने श्रीरामचन्द्र जी कहाँ गये ? भरत शत्रुघ्न तथा वानरकुलश्रेष्ठ सुग्रीव इन चारों का यहाँ अता-पता नहीं मिल रहा। अरे कोई भी दैत्यों की माया को नहीं समझ पाया। २०६-२०७ शंकर जी बोले, हे पार्वती ! सुनो। कल्पासुर तथा पातालकेतु यह दोनों दैत्य संग्रामभूमि से प्रसन्नतापूर्वक चले गये

बोइले जुद्धर कथा जाक ताहा आगे ।
शुणि दानब आस्थानु उठि आसि बेगे ।। २१० ।।
दुहिँकर हात धरि कला गउरव ।
शत्रुक्षय ध्वजा बान्धि कळे महोत्सब ।। २११ ।।
प्रचण्ड पर्वतु हनु आइला ओल्हाइ ।
बिभीषण निकटरे प्रबेशिला जाइ ।। २१२ ।।
तेते बेळे रजनी जे द्वितीय प्रहर ।
शुकळपक्ष अष्टमी तिथि रबिबार ।। २१३ ।।
तिनि दिन तिनि राति माया जुद्ध करि ।
से दिन रातिरे गले रण जय करि ।। २१४ ।।
प्रहरेक रातिरे जे जुद्धस्थानु गले ।
तहुँ दुइ घड़िरे से पुरे प्रबेशिले ।। २१५ ।।
तदुत्तार हनु आसि मिळिलाक तहिँ ।
अश्विन मास चन्द्रमा आकाशरे उइँ ।। २१६ ।।
रण भूमिकि दिवस प्राय अछि करि ।
मारुति बोइला आहे लंका दण्डधारी ।। २१७ ।।
बिधाता अमर बर देइअछि तोते ।
असुरंक हाते एथे मलु तु केमन्ते ।। २१८ ।।

तथा लक्षकण्ठ के समक्ष जा पहुँचे । २०८-२०९ युद्ध का सम्पूर्ण समाचार उसके आगे कह सुनाया । सुनते ही दानव ने शीघ्रता से सिंहासन से उठकर आकर दोनों का हाथ पकड़कर सम्मान किया और शत्रुदमन की ध्वजा उड़ाकर महान उत्सव मनाया । २१०-२११ हनुमान प्रचण्ड पर्वत से उतर आये तथा विभीषण के पास जा पहुँचे । २१२ उस दिन रात्रि का द्वितीय प्रहर था और शुक्लपक्ष की अष्टमी की तिथि तथा रविवार का दिन था । २१३ तीन दिन और तीन रात माया-युद्ध करके उसी दिन रात्रि में (दोनों असुर) संग्राम जीतकर गये थे । २१४ वह लोग युद्धस्थल से एक प्रहर रात्रि बीतने पर गये थे और वहाँ से दो घड़ी में नगर में जा पहुँचे थे । २१५ उसी के उपरान्त हनुमान वहाँ आये थे । आश्विन मास के शशिकर ने गगन में उदय होकर रणभूमि को दिन जैसा (प्रकाशित) कर दिया था । हनुमान जी ने कहा, हे लंका के अधिपति ! ब्रह्मा ने तुम्हें अमरत्व का वर दिया है । तुम यहाँ असुरों के हाथों से कैसे मृत्यु को प्राप्त हुए । २१६-२१८

जणा जाए दइबर बळ अटे मूळ ।
देबता मानंक कथा मिथ्याहिँ केबळ ।। २१९ ।।
उठ उठ डाकु अछि मुहिँ हनुमान ।
सर्वज्ञ पुरुष तु हो रावणर सान ।। २२० ।।
असुर होइ तु माया जाणि न पारिलु ।
आपणा हस्ते आपणा जीवनकु देलु ।। २२१ ।।
आम्भंकु अनाथ करि प्रभु रघुनाथ ।
संगे घेनि मित्रभाव शत्रुघ्न भरत ।। २२२ ।।
कि बुद्धि करिबि मुहिँ बंचि अछि एका ।
एते बोलि उठाइला मने पाइ शंका ।। २२३ ।।
न उठिला जहुँ हनु करइ रोदन ।
राज्यसुख भोग तेजि हराइलु प्राण ।। २२४ ।।
धिक धिक बिधातारे धिक तोर कथा ।
धार्मिक बिबेकवन्त जेउँ महारथा ।। २२५ ।।
स्वर्णमय लंकापुर सुख भोग छाड़ि ।
बिलंकार शमशाने आसि अछि पड़ि ।। २२६ ।।
तहुँ कान्दि कान्दि जाइँ जाम्बवान पाशे ।
बोइला भो मंत्रीबर ए बिलंका देशे ।। २२७ ।।

ज्ञात होता है कि भाग्य का बल ही इसकी जड़ है और देवताओं के वर मात्र झूठ ही हैं । २१९ उठो ! उठो ! मैं हनुमान बुला रहा हूँ । तुम तो रावण के कनिष्ठ भ्राता और सब कुछ जाननेवाले व्यक्ति हो । २२० असुर होकर भी तुम माया को नहीं समझ सके तथा तुमने अपने हाथों अपना जीवन दे डाला । २२१ प्रभु रघुनाथ जी मित्र-भाव से भरत व शत्रुघ्न को साथ लेकर हमें अनाथ कर गये । २२२ क्या उपाय करूँ ? मैं अकेला ही बचा हूँ । ऐसा कहकर उन्होंने शकितमन से उसे उठाया । २२३ जब वह नहीं उठा तो हनुमान रोने लगे । अरे ! राज्य के सुखभोग को छोड़कर तुमने प्राण गँवा दिये । २२४ हे ब्रह्मा ! तुम्हें धिक्कार है । तुम्हारी बातों को धिक्कार है । जो महारथी धर्म को माननेवाला विवेकी था, वह स्वर्णमयी लकापुरी के सुखमय भोगों को त्याग कर बिलंका के श्मशान में आकर पड़ा है । २२५-२२६ वहाँ से रोते-रोते जामवन्त के निकट जाकर (हनुमान) कहने लगे । हे श्रेष्ठ मंत्री ! इस बिलंका प्रदेश में, पृथ्वी शवों और शिरों से पूर्ण है । देखो चण्डी और चामुण्डा दौड़ी

मड़ा मशाणिरे पूरिअछि एहि भुइँ ।
देख चण्डी चामुण्डाए आसुछन्ति धाइँ ॥ २२८ ॥

काक गृद्ध शृगालंक राव भयंकर ।
उठ उठ जिबा बेगे पर्बत उपर ॥ २२९ ॥

मुहिँ हनुमान कथा न कहुछु मोते ।
बुद्धि दिअ श्रीरामंकु पाइबा केमन्ते ॥ २३० ॥

एत कहि उठाइला दुइ हस्त तोळि ।
न उठिला चेताहत हेतु महबळी ॥ २३१ ॥

देखि हनुमानर जे बुद्धि गला हजि ।
शोक समुद्ररे बीर गोटा जाक मज्जि ॥ २३२ ॥

नळ नीळ अंगदकु उठाइला जाइँ ।
पड़िछन्ति तिनिजण चेतना हराइ ॥ २३३ ॥

देखि मुण्डे हात देइ बसि गला हनु ।
चक्र बोले शोक तेज पबनर सूनु ॥ २३४ ॥

हनुमानर अयोध्या गमन ओ लक्ष्मण सीतांकर बिलंका यात्रा

शंकर कहन्ति पुणि शुण तु गउरी ।
ब्रह्मा आदि देबगण स्वर्गे सभा करि ॥ १ ॥

चली आ रही हैं । २२७-२२८ कौवों-गीधों तथा शृगालों का भयंकर शब्द हो रहा है । उठो-उठो शीघ्र पर्वत के ऊपर चलें । २२९ मैं हनुमान हूँ । मुझसे बात क्यों नहीं कर रहे हो ? उपाय बताओ कि श्रीराम को कैसे प्राप्त करूँ ? २३० ऐसा कहकर दोनों हाथ उठाकर उसे उठाया । परन्तु मूर्च्छित होने के कारण महाबली नहीं उठा । २३१ यह देखकर हनुमान की बुद्धि हर गई । पराक्रमी वीर शोकसिन्धु में डूब गया । २३२ उन्होंने जाकर नल-नील तथा अंगद को उठाया । तीनों जन चेतनाशून्य होकर पड़े थे । २३३ यह देखकर हनुमान शिर पर हाथ रखकर बैठ गये । चक्रधर कहता है कि हे पवननन्दन ! शोक का त्याग कर दो । २३४

हनुमान का अयोध्या-गमन और लक्ष्मण तथा सीता की बिलंका-यात्रा

शंकर जी ने फिर कहा, हे गौरी ! तुम सुनो । ब्रह्मा आदि सभी देवताओं ने सभा करके कहा कि पातालकेतु ने तो सर्वनाश कर दिया । वह

बोइले पाताळकेतु कला सर्वनाश ।
केमन्ते मरिब सेहि दारुण राक्षस ।। २ ।।
बृहस्पति बोइले हे किछिहिँ न भाळ ।
अजोध्यापुरकु जाइँ पवन दुलाळ ।। ३ ।।
बारता कहिले सीता लक्ष्मण आसिबे ।
बिलंकापुररे पशि असुर नाशिबे ।। ४ ।।
पबनकु कुह जाइ कहु ता पुअकु ।
अजोध्यारु आणु जाइ सीता लक्ष्मणंकु ।। ५ ।।
शुणि बासब पबन देबताकु चाहिँ ।
बोइले हो देवकार्ज कर जाइँ तुहि ।। ६ ।।
असुर न मले जाण सरिबटि सबु ।
बेगे जाअ बिळम्ब तु न करहो बाबु ।। ७ ।।
राम बिने हनुमान हराइले प्राण ।
निश्चे नाशजिब एहि स्वर्गपुर जाण ।। ८ ।।
एमन्त बासब मुखुँ शुणिण पबन ।
पुत्र निकटकु कला सत..े गमन ।। ९ ।।
बोइला रे पुत्र किम्पा शोक करु बसि ।
बेगे जाइँ अजोध्याकु सीता घेनि आसि ।। १० ।।
लक्ष्मणंक आगे कहि जुद्ध कथा मान ।
दुराचारी राक्षसंकु कराअ निधन ।। ११ ।।

दुर्दान्त राक्षस कैसे मरेगा ? १-२ बृहस्पति ने कहा कि हे देवो ! कुछ भी मत सोचो। पवननन्दन के अयोध्या नगरी को जा करके समाचार देने पर सीता तथा लक्ष्मण आएँगे। वह बिलंकापुर में घुसकर असुरों का संहार करेंगे। ३-४ पवन से जाकर कहो कि वह अपने पुत्र से अयोध्या से लक्ष्मण तथा जानकी को लाने को कहे। ५ यह सुनकर इन्द्र ने पवनदेव की ओर देखकर कहा कि तुम जाकर देव-कार्य करो। ६ असुर के मरने से सब कुछ समाप्त हो जायेगा। हे तात ! तुम शीघ्र ही गमन करो। विलम्ब मत करो। ७ राम के बिना हनुमान के प्राण दे देने पर निश्चित रूप से स्वर्गपुरी नष्ट हो जाएगी ऐसा समझ लो। ८ इन्द्र के मुख से इस प्रकार सुनकर पवनदेव शीघ्रता से पुत्र के निकट जा पहुंचे। ९ वह बोले, अरे वत्स ! बैठकर शोक क्यों कर रहे हो ? शीघ्र ही अयोध्या जाकर सीता को ले आओ। १० लक्ष्मण के आगे युद्ध के सारे हाल

हनु बोले कह पिता प्रभु मोर काहिं ।
न देखिले ए जीवन न रखिबि मुहिं ॥ १२ ॥
पवन बोइले तुहि न हुअ कातर ।
पाताळकेतुर माया अति अगोचर ॥ १३ ॥
माया जुद्धे तांकु नेइ रखिछि पाताळ ।
न पाइबु बाबु तुहि खोज केते बेळ ॥ १४ ॥
न मले असुरे सेहि न मिळिब जाण ।
तोर हस्ते अबध्य ऐ दैत्य तिनिजण ॥ १५ ॥
बेगे बाबु जाअ क्षणे बिळम्ब न कर ।
हनु बोले पिता कह एहि पाञ्चबीर ॥ १६ ॥
केमन्ते पाइबे रक्षा गृध्र जिब खाइ ।
पवन बोलइ पुत्र न भाळता पाइं ॥ १७ ॥
जगिबु एहाकु आम्भे तु आगिबा जाए ।
असुरे मले जीवन पाइबे सभाएँ ॥ १८ ॥
हनु बोइला भो तात साहा हुअ मोते ।
निमिषके अजोध्यारे मिळइ जेमन्ते ॥ १९ ॥
पिता पुत्र दुहेँ मिळि निमिषके मले ।
अजोध्यापुररे जाइँ प्रबेश होइले ॥ २० ॥

कहकर दुराचारी राक्षसों का संहार कराओ। ११ हनुमान बोले, हे पिता! बताओ! मेरे प्रभु श्रीराम कहाँ हैं? उन्हें न देखने से मैं इस जीवन को नहीं रखूँगा। १२ पवनदेव ने कहा कि तुम अधीर मत हो। पातालकेतु की माया अत्यन्त अगोचर है। १३ माया युद्ध द्वारा उन्हें लेकर उसने पाताल में रखा है। हे वत्स! तुम खोजकर कभी उन्हें नहीं पा सकोगे। १४ असुर के न मरने पर वह नहीं मिल सकते। ऐसा जान लो। यह तीनों दैत्य तुम्हारे हाथों द्वारा वध्य नहीं है। १५ हे वत्स! एक क्षण का भी विलम्ब किये बिना तुम शीघ्र ही जाओ। हनुमान ने कहा, हे पिता जी! इन पाँचों वीरों की रक्षा कैसे होगी? इन्हें तो गीध ही खा जायेंगे। पवनदेव ने कहा, बेटा! इनके लिए सोच मत करो। १६-१७ तुम्हारे आने तक मैं इनकी देखभाल करूँगा। असुर के निधन से यह सब जीवित हो जाएँगे। १८ हनुमान ने कहा कि हे तात! आप मेरे सहायक बन जाइये। जिससे मैं एक क्षण में ही अयोध्या पहुँच सकूँ। १९ पिता-पुत्र दोनों मिलकर एक क्षण में ही अयोध्या

सूर्य्य उदेकाळे जाइँ प्रबेशिला हनु ।
अश्रुजळ गळुअछि ता बेनि नयनु ॥ २१ ॥
हनु कान्दिबार देखि अजोध्यार लोके ।
बाळ बृद्ध जुवा स्त्री निमज्जिले शोके ॥ २२ ॥
कि हेला कि हेला हनु जुद्ध समाचार ।
काहिँ गले कह प्रभु रघुकुळबर ॥ २३ ॥
एकाके अइलु बाबु नहान्ति त केहि ।
काहिँकि नयनु तोर लूह पड़े बहि ॥ २४ ॥
हनु बोले कि कहिबि हेला सर्बनाश ।
शुणिब जेबे समस्ते मो संगते आस ॥ २५ ॥
शोकभर होइ पच्छे पच्छे गले लोके ।
मारुति प्रबेश जाइँ लक्ष्मणंक पाशे ॥ २६ ॥
शिरे कर दुइ जोड़ि बोले हनुमान ।
अजोध्या किष्किन्ध्या लंका ए तिनि भुबन ॥ २७ ॥
आजि ठारु शोकसिन्धु मध्ये गला बूड़ि ।
एमन्त कहिण मूर्च्छा जाइ हनु पड़ि ॥ २८ ॥
शुणि लक्ष्मणकु नेत्रु बहि पड़े नीर ।
राणी हंसपुरकु जे गला ए खबर ॥ २९ ॥

पहुँच गये। तथा अयोध्यानगरी में जाकर प्रविष्ट हुए। २० हनुमान सूर्योदय के समय प्रविष्ट हुए। उनके दोनों नेत्रों से अश्रुबिन्दु बह रहे थे। २१ हनुमान को रोते देख अयोध्यावासी वृद्ध, युवक, बालक तथा स्त्रियाँ शोकमग्न हो गयीं। २२ हे हनुमान ! युद्ध में क्या हुआ ? कैसा हुआ ? रघुकुलश्रेष्ठ प्रभु राम कहाँ गये ? २३ हे भाई ! तुम अकेले आये हो और तो कोई भी नहीं है। तुम्हारे नेत्रों से आँसू क्यों बह रहे हैं ? २४ हनुमान ने कहा कि क्या बताएँ ? सर्वनाश हो गया। यदि तुम सब सुनना चाहते हो तो मेरे साथ आओ। २५ शोकसन्तप्त लोग पीछे-पीछे चल पड़े। मारुति श्री लक्ष्मण जी के निकट जा पहुँचे। २६ दोनों हाथ जोड़कर शिर में लगाते हुए हनुमान ने कहा कि अयोध्या, किष्किन्धा तथा लंका यह तीनों प्रदेश आज से शोकसागर में डूब गये। इतना कहते हुए हनुमान मूर्च्छित होकर गिर पड़े। २७-२८ यह सुनकर लक्ष्मण की आंखों से अश्रु बहने लगे। यह समाचार रानियों के महलों में भी जा पहुँचा। २९ मातायें सुनते ही मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़ीं।

माता माने शुणि पड़ि मूर्च्छा तळे तळे ।
रोदन करन्ति मारि करकु कपाळे ॥ ३० ॥
रोदन ध्वनिरे पुर पड़िला उछळि ।
पुणि शिरे कर ताड़ि जनक दुलाळी ॥ ३१ ॥
बोइले लक्ष्मण बेगे सजकर रथ ।
बिलंकाकु जिबा बाबु काहिँ गले नाथ ॥ ३२ ॥
खोजि न पाइले तहिँ हराइबि प्राण ।
शुणि क्रोध शान्ति करि बोइले लक्ष्मण ॥ ३३ ॥
न हुअ कातर केहि शोक त्याग कर ।
मारिबि बिलंकापुरे पशिण असुर ॥ ३४ ॥
पाताळे असुर नेइ रखिथिब जाहिँ ।
निश्चे खोजि आणिबइँ श्रीरामंकु मुहिँ ॥ ३५ ॥
एते कहि धनुधरि हेले बेग सज ।
बिकाशिले खराबेळे सूर्य्य प्राय तेज ॥ ३६ ॥
सज होइ बाहारिले सीता ठाकुराणी ।
लक्ष्मण बोइले तुम्भे अजोध्यार राणी ॥ ३७ ॥
काहिँ पाइँ जिब पुर मध्ये थाअ रहि ।
एमन्त शुणि बोइले देबी बइदेही ॥ ३८ ॥

वह हाथों से शिर धुन-धुनकर रुदन कर रही थीं । ३० क्रन्दन-ध्वनि से नगर उद्वेलित हो उठा । फिर जनकनन्दिनी ने हाथों से शिर धुनते हुए कहा, हे लक्ष्मण ! शीघ्र ही रथ सज्जित करो ! हे वत्स ! बिलंकापुर चलेंगे । न जाने स्वामी कहाँ चले गये ? ३१-३२ यदि उन्हें न खोज पाई तो प्राण त्याग दूँगी । यह सुनकर क्रोध को शान्त करके लक्ष्मण जी बोले । ३३ कोई भी अधीर मत हो ! शोक का त्याग कर दो । बिलंकापुर में घुसकर मैं असुरों का वध करूँगा । ३४ असुर ने ले जाकर पाताल में जहाँ कहीं भी रखा होगा वहाँ से मैं श्री रामचन्द्र जी का निश्चय ही खोज लाऊँगा । ३५ इतना कहकर धनुष उठाकर तैयार हो गये । ग्रीष्म ऋतु के सूर्य के समान उन्होंने तेज विकसित किया । ३६ राजरानी सीता तैयार होकर निकल पड़ी । लक्ष्मण ने कहा कि आप अयोध्या की महारानी हैं । ३७ आप किसलिए जाएँगी । आप महलों में रहें । ऐसा सुनकर देवी जानकी ने कहा । ३८ हे वत्स ! मैं तो जाऊँगी । मुझे रोको मत । वह बिलंकानरेश अत्यन्त प्रतापी है । ३९

जिबइँरे बाबु मोते न कर बारण ।
बड़ प्रतापी अटइ से बिलंका राण ।। ३९ ।।
एते कहि आग होइ बसिलेक रथे ।
लक्ष्मण बसिले पच्छे धनुशर हस्ते ।। ४० ।।
तांक पच्छे हनुमान चढ़िला बिमान ।
शून्यरे उठिला सेहि कुबेरर जान ।। ४१ ।।
चाहुँ चाहुँ अदृश्य जे होइला गगने ।
शोक समुद्ररे बूड़ि गले पुर जने ।। ४२ ।।
राणी मानंकर शोक के पारिब कहि ।
चातक पक्षी पराय रहिलेक चाहिँ ।। ४३ ।।
क्षणके मिळिला रथ प्रचण्ड पर्बते ।
जानकी बोइले मुहिँ अछि एहि रथे ।। ४४ ।।
तुम्हे दुहेँ जाइ कर दैत्य संगे रण ।
हनुमन्तकु अनाइ बोइले लक्ष्मण ।। ४५ ।।
ए पुष्पक रथे देबी थिले नाहिँ भय ।
चाल आम्भे करिबा जे दानवकु क्षय ।। ४६ ।।
एमन्त बोलि बाहार होइले लक्ष्मण ।
संगतरे अछि बीर पबननन्दन ।। ४७ ।।
बिलंकार सिंहद्वारे अछि पड़िहारी ।
ताहाकु कहिले कह जाइँ शीघ्र करि ।। ४८ ।।

इतना कहकर आगे बढ़कर वह रथ पर जा बैठीं। हाथों में धनुष-बाण लेकर लक्ष्मण पीछ बैठ गये। ४० उनके पश्चात् हनुमान विमान पर चढ़ गये। वह कुबेर का विमान आकाश में उठ गया। ४१ देखते-देखते वह गगन में अदृश्य हो गया। पुरवासी लोग शोकसिन्धु में डूब गये। ४२ रानियों के शोक के विषय में कौन कह पाएगा। वह चातक पक्षी के समान देखती ही रह गईं। ४३ क्षण मात्र में विमान प्रचण्ड पर्वत पर पहुँच गया। जानकी ने कहा कि मैं इसी रथ पर रहूँगी। ४४ तुम दोनों जाकर दैत्य के साथ युद्ध करो। हनुमान की ओर देखकर लक्ष्मण ने कहा। ४५ इस पुष्पक विमान पर देवी सीता के रहने से कोई डर नहीं है। चलो हम लोग चलकर दानव का नाश करें। ४६ ऐसा कहकर लक्ष्मण बाहर निकले। उनके साथ पराक्रमी पवनपुत्र थे। ४७ बिलंका के सिंहद्वार पर प्रतिहारी था। उन्होंने उससे कहा कि शीघ्र

श्रीरामर भाइ जार नामटि लक्ष्मण ।
जे मारिछि इन्द्रजित रावण नन्दन ।। ४९ ।।
से मागुछि जुद्ध आसि सिंहद्वारे रहि ।
रथ गज थाट तार संगतरे नाहिँ ।। ५० ।।
एका अछि हनुमान पवननन्दन ।
जेहु पोड़ि थिला तोर बिलंका भुवन ।। ५१ ।।
एहा शुणि पड़िहारी बेगे गला धाइँ ।
बोइला मणिमा शुण दैत्य कुळसाइँ ।। ५२ ।।
श्रीरामर भाइ नाम अटइ लक्ष्मण ।
एकाळे से द्वारे रहि मागुअछि रण ।। ५३ ।।
संगे अछि हनुमान पवननन्दन ।
जुद्ध न देले से पुर करिब दहन ।। ५४ ।।
शुणि लक्षणिरा कोपे मन्त्रीकि हकारि ।
बोले शुणि कहुअछि आसि प्रतिहारी ।। ५५ ।।
कळपा असुर शुणि बोलइ हे राय ।
आम्भे दुहेँ जाउअछु तुम्भे रहि थाअ ।। ५६ ।।
मायाबळे ताकु आम्भे आसुछु संहारि ।
एमन्त बोलि पाताळकेतुकु हकारि ।। ५७ ।।

ही जाकर (राजा से) कहो कि श्रीराम का भाई, जिसका नाम लक्ष्मण है और जिसने रावण के पुत्र इन्द्रजित् को मारा है, वह आकर सिंहद्वार पर खड़ा युद्ध की याचना कर रहा है। उसके साथ रथ, हाथी तथा सेना कुछ भी नहीं है। ४८-५० एकमात्र पवनपुत्र ही है जिसने तुम्हारे बिलंका नगर को जलाया था। ५१ ऐसा सुनकर प्रतिहारी ने शीघ्रता से जाकर कहा, हे राजराजेश्वर ! दैत्यकुल के नाथ ! श्रीराम का भाई, जिसका नाम लक्ष्मण है, एकाकी द्वार पर खड़ा युद्ध की याचना कर रहा है। ५२-५३ पवनपुत्र हनुमान उसके साथ में है। युद्ध न करने से वह नगर को भस्म कर देगा। ५४ ऐसा सुनकर लक्षकण्ठ ने कुपित होकर मंत्री को बुलाकर कहा कि प्रतिहारी आकर जो कह रहा है उसे सुनो। ५५ कल्पासुर ने सुनकर कहा, हे महाराज ! हम दोनों जा रहे हैं। आप यहीं रहें। ५६ माया के बल से हम उन्हें मार कर आते हैं। ऐसा कहकर पातालकेतु को बुलाकर माया के रथ, हाथी, सेना साथ लेकर दोनों दैत्य बिलंका से निकले। ५७-५८ वह उत्तरी द्वार के मार्ग से बाहर

मायाबळे रथ गज थाट संगे घेनि ।
बाहारिले बिलंकारु से असुर बेनि ॥ ५८ ॥
उत्तर दुआर बाटे होइले बाहार ।
थाट माड़ि आसुअछि लहड़ि प्रकार ॥ ५९ ॥
पूर्वद्वारे थिले हनु सुमित्रानन्दन ।
असुर थाटकु देखि बोले हनुमान ॥ ६० ॥
आसिले से दुइ गोटा मायावी असुर ।
सागर समान थाट होइले बाहार ॥ ६१ ॥
मायारे ए सैन्य सबु अछन्ति भिआइ ।
बिचारि जुद्ध करिबा आम्भे एथे थाइ ॥ ६२ ॥
एहि मायाबळे करि अ[illegible] सर्बनाश ।
कोपे सउमित्रि हेले अनळ सदृश ॥ ६३ ॥
नारायणी चक्रकु से बसाइले गुणे ।
श्रीराम सुमरि छाड़ि देले ततक्षणे ॥ ६४ ॥
कोटि कोटि देवी तहुँ होइले बाहार ।
के धरिछि खडगके धरिछि खपर ॥ ६५ ॥
काहा हस्ते भइरबी चक्र बिराजुछि ।
केहि खेमटा नाटरे नाचि जाउअछि ॥ ६६ ॥
टह टह हसे केहि गह गह नादे ।
म[illegible]दिले असुरंकु केहि केहि पादे ॥ ६७ ॥

आये । सैन्यवाहिनी लहरों के समान उमड़ती चली आ रही थी । ५९ हनुमान तथा लक्ष्मण जी पूर्वी द्वार पर थे । असुर-सेना को देखकर हनुमान ने कहा कि दोनों मायावी राक्षस आ गये । सागर के समान सेना बाहर आ रही है । ६०-६१ यह सेना इन्होंने माया से उत्पन्न की है । हम लोग यहीं रहकर समझ-बूझकर युद्ध करेंगे । ६२ इसी माया के बल से इसने सर्वनाश कर डाला है । क्रोध के कारण सुमित्रानन्दन अग्नि के समान हो गये । ६३ उन्होंने नारायणी चक्र को प्रत्यञ्चा पर चढ़ाया और उसी क्षण श्रीराम का स्मरण करके छोड़ दिया । ६४ उससे करोड़ों देवियाँ प्रकट हो गईं । कोई तलवार लिये थीं, कोई खप्पर । ६५ किसी के हाथ में भैरवी चक्र सुशोभित था । कोई विशेष प्रकार का नृत्य करती हुई चली जा रही थी । ६६ कोई अट्टहास, कोई हुंकार करती हुई असुरों का विनाश कर रही थी । किसी ने किसी को पैरों से, किसी

केउँ देबी खड्गरे पकाइला हाणि ।
घड़िकरे निपातिले असुर सइनि ॥ ६८ ॥
असुर मायाकु जहुँ कले से बिनाश ।
मायारथ आरोहिले से दुइ राक्षस ॥ ६९ ॥
कोपे सउमित्रि धनु धइलेक करे ।
बइष्णवी चक्र बेगे बसाइ गुणरे ॥ ७० ॥
बोइले पाताळकेतु असुरकु मार ।
बेनि खण्ड करि तळे पका तार शिर ॥ ७१ ॥
एहा कहि छाड़ि देले श्रीराम सुमरि ।
शून्ये जाइँ बिराजिला कोटि सूर्य्यपरि ॥ ७२ ॥
देखि भये दानव जे होइला शूकर ।
रण छाड़ि पळाइण गला खण्डे दूर ॥ ७३ ॥
गर्जन करि से चक्र शून्यरु खसिला ।
पाताळकेतुर शिर दुइ खण्ड कला ॥ ७४ ॥
दानवकु मारि आसि पशिला तूणीरे ।
देबे पुष्प बृष्टि कले लक्ष्मणर शिरे ॥ ७५ ॥
बोइले धन्य धन्य तु सुमित्रानन्दन ।
तिनि पुरे नाहिँ बीर तोहर समान ॥ ७६ ॥

देवी ने खड्ग से मार गिराया। एक घड़ी में (देवियों ने) असुर-सेना का संहार कर दिया। ६७-६८ जब उन्होंने आसुरी माया को नष्ट कर दिया, तब दोनों राक्षस माया-रथ पर सवार हो गये। ६९ कुपित होकर सुमित्रानन्दन ने हाथों में धनुष उठा लिया। उन्होंने शीघ्रता से वैष्णवी चक्र को प्रत्यञ्चा पर चढ़ाकर कहा कि पातालकेतु असुर को मार दो और उसका शिर दो टुकड़ों में काटकर गिरा दो। ७०-७१ यह कहकर श्रीराम का स्मरण करके (वैष्णवी चक्र को) छोड़ दिया। वह आकाश में जाकर करोड़ सूर्यों के समान सुशोभित हुआ। ७२ यह देखकर राक्षस भय के कारण शूकर बन गया। रण छोड़कर भागकर थोड़ी दूर चला गया। ७३ तभी गर्जन करता हुआ चक्र आकाश से नीचे उतरा तथा उसने पातालकेतु के शिर के दो टुकड़े कर दिये। ७४ दानव का वध करके आकर वह तूणीर में प्रविष्ट हो गया। देवताओं ने लक्ष्मण के शिर पर पुष्पों की वर्षा की। ७५ वह कहने लगे कि हे सुमित्रानन्दन! तुम धन्य हो। धन्य हो! तीनों लोकों में तुम्हारे समानता का वीर

लंकारे तु मारिथिलु बीर इन्द्रजित ।
माया जुद्धे बांधि थिला देव पुरुहत ॥ ७७ ॥
जाहार मायाकु जाणि न पारन्ति हर ।
तेड़े बीर गोटाकु तु कलु जे संहार ॥ ७८ ॥
ताठारु बळि एहार माया अकळित ।
देब दानबे मानबे अटे अबिदित ॥ ७९ ॥
एहाकु माइलु एणु बोलु तोते धन्य ।
तिनि भुबनरे हेलु कल्याण भाजन ॥ ८० ॥
पाताळकेतु मरिबा देखिण कळपा ।
धाइण से मने मने होइ बड़ खप्पा ॥ ८१ ॥
धनु धरि आच्छादिले नाराचे गगन ।
एका बाणे काटिले ता सुमित्रानन्दन ॥ ८२ ॥
पाशुपत बाण गोटे बसाइले गुणे ।
रुद्र देवतांकु सुमरिले मने मने ॥ ८३ ॥
सुप्रसन्ने रुद्र तेज देलु आम्भे तांकु ।
मन्त्र पढ़ि फिंगि देला कोपे नाराचकु ॥ ८४ ॥
रुद्रमूर्त्ति धरि गला गगनकु क्षेपि ।
होइला शर प्रळय अनळ स्वरूपी ॥ ८५ ॥

नहीं है । ७६ लंका में तुमने पराक्रमी इन्द्रजित् को मारा था जिसने माया-युद्ध में देवराज इन्द्र को बाँध लिया था । ७७ जिसकी माया को शंकर भी नहीं समझ पाते हैं । उतने बड़े वीर का तुमने संहार कर दिया । ७८ इसकी माया उससे भी अधिक शक्तिमयी तथा अवर्णनीय थी । वह देवता, दानव तथा मानव द्वारा जानी नहीं जाती थी । ७९ तुमने उसे मार डाला । इसी से तो तुम्हें धन्य-धन्य कह रहे हैं । तुम तीनों लोकों के कल्याण के पात्र हो गये । ८० पातालकेतु की मृत्यु को देखकर कल्पासुर दौड़ते हुए मन ही मन बहुत क्रुद्ध हो गया । ८१ उसने धनुष उठाकर बाणों से आकाश को आच्छादित कर दिया । सुमित्रा-कुमार ने एक बाण से उन्हें काट दिया । ८२ फिर उन्होंने पाशुपत बाण प्रत्यञ्चा पर चढ़ाया और मन ही मन रुद्रदेव का स्मरण किया । ८३ प्रसन्न होकर उसे मैंने रुद्रतेज प्रदान किया । उन्होंने मंत्र पढ़कर क्रोध-पूर्वक वह बाण छोड़ दिया । ८४ वह बाण रौद्र-रूप धारण कर आकाश म प्रलयाग्नि के स्वरूप में चला तथा रथ-सहित कल्पासुर को भस्म करके

रथ सहित कळपा असुरकु दहि ।
लक्ष्मण तूणीरे आसि बाहुड़िण रहि ॥ ८६ ॥
देखिण देवता गणे परशंसा कले ।
लक्ष्मणंकु धन्य धन्य बोलिण बोइले ॥ ८७ ॥
जय जय शबदरे पुरिला आकाश ।
चक्र बोले एका अछि दुर्दान्त राक्षस ॥ ८८ ॥

सीतांकर काळीरूप धारण ओ लक्षशिरार बध

एथुअन्ते हिमवन्त जेमा तु गो शुण ।
पाप तिमिरिकि एहि सूर्य्य सम जाण ॥ १ ॥
चार जाइँ जणाइला लक्षशिरा आगे ।
पाताळकेतु असुर मला मंत्री संगे ॥ २ ॥
दुहेँ छार नर हाते हराइले प्राण ।
राम ठारु ए मानब बीर पणे टाण ॥ ३ ॥
शुणि लक्षशिरा कोपे उठे शिर झुणि ।
धाइँलाक असम्भाळ होइ गदा घेनि ॥ ४ ॥
चक्रप्राय बुलाइला देइ सिंह रड़ि ।
आकाश वोटिछि तार काया गोटि बेढ़ि ॥ ५ ॥

लक्ष्मण के तरकस में लौटकर स्थित हो गया । ८५-८६ यह देखकर देवता प्रशंसा करने लगे तथा लक्ष्मण को धन्य ! धन्य ! कहने लगे । ८७ जयकारों के निनाद से आकाश भर गया । चक्रधर कहते हैं कि अब अकेले दुर्धर्ष दैत्य ही रह गया । ८८

सीता का काली-रूप धारण तथा लक्षकण्ठ का वध

हे हिमाद्रिनन्दिनी ! इसके बाद तुम सुनो । इसे पाप-रूपी अन्धकार के लिए सूर्य के समान समझो । १ दूत ने लक्षकण्ठ के पास जाकर निवेदन किया कि पातालकेतु मंत्री के सहित मर गया । २ दोनों ने [illegible] मानव के हाथों प्राण दे दिये । यह मानव तो वीरत्व में राम से भी अधिक तेजतर्रार है । ३ यह सुनकर लक्षकण्ठ शिर को [illegible] कांपता हुआ उठा और गदा लेकर आतुरता से दौड़ पड़ा । ४ [illegible] करता हुआ वह उसे चक्र के समान घुमाने लगा । [illegible] विस्तृत [illegible] आकाश में फैल गया । ५ दानव का वह भयानक रूप देखकर लक्ष्मण

देखि दानबर सेहि भयंकर रूप ।
बेळु बेळु बढ़ि गला लक्ष्मणंक कोप ।। ६ ।।
धनुधरि बिन्धिले जे कोटि कोटि बाण ।
असुर देहरे पड़ि सबु हुए चूर्ण ।। ७ ।।
गर्जइ से काळान्तक मेघ परकारे ।
बोलइ मानव फेरि जिबु किरे घरे ।। ८ ।।
टिकि टिकि करि तोर मांस देबि खाइ ।
पाताळकेतुर हस्ते मले तोर भाइ ।। ९ ।।
तु मरिबु मोर हस्ते घड़ि एक रह ।
पूरिलाणि तो आयुष जिबु जम गृह ।। १० ।।
एते कहि गदा धरि अइलाक धाइँ ।
हनुमान गदा नेला हस्तरु छड़ाइ ।। ११ ।।
पिटिला से लुहा गदा बुलाइ ता शिरे ।
मूर्च्छा पाइण असुर पड़िला भूमिरे ।। १२ ।।
बिश्वमूर्त्ति धरि हनु बसिलाक माड़ि ।
अचेतन होइ दैत्य तळे अछि पड़ि ।। १३ ।।
शुण शाकम्बरी तु गो अद्भुत कथाए ।
लय लगाइले सीता जोगमाया प्राये ।। १४ ।।

का क्रोध धीरे-धीरे बढ़ गया । ६ उन्होंने धनुष लेकर करोड़ों-करोड़ों बाण छोड़े । परन्तु वह सभी असुर के शरीर पर लगकर चूर-चूर हो गये । ७ वह कालान्तक मेघ के समान गर्जना कर रहा था । वह कह रहा था कि अरे मानव ! क्या तू लौटकर घर जायेगा ? ८ थोड़ा-थोड़ा करके तेरा मांस खा डालूँगा । तेरे भाई पातालकेतु के हाथों मारे गये । ९ एक घड़ी रुक जा । तू मेरे हाथों मारा जाएगा । तेरी आयु समाप्त हो गई है । अब यमालय को जाएगा । १० इतना कहकर गदा लेकर दौड़कर आ गया । हनुमान ने उसके हाथ से गदा छीन ली । ११ उन्होंने गदा को घुमाकर उसके शिर पर दे मारा । असुर मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा । १२ विराट रूप धारण करके हनुमान उस पर चढ़ बैठे । दैत्य अचेत होकर नीचे पड़ा था । १३ से शाकम्बरी ! तुम यह विचित्र कथा सुनो । सीता ने योगमाया के प्रति ध्यान लगाया । १४ आसन को दृढ़ करके वह ध्यान में मग्न हो

आसनकु दृढ़ करि ध्याने हेले मग्न ।
जोगमाया अहो रात्रे होइले प्रसन्न ।। १५ ।।
बोइले कि बरे इच्छा अछइ तोहर ।
मागिला मात्रके तोते देबि सेहि बर ।। १६ ।।
एमन्त आकाश बाणी शुणि ठाकुराणी ।
जोगमाया स्तुति कले जोड़ि बेनि पाणि ।। १७ ।।
बोइले गो माता जेबे होइलु प्रसन्न ।
जेमन्ते मरिब एहि बिलका राजन ।। १८ ।।
तहिंर उपाय मोते कह कृपा करि ।
एमन्त शुणि बोइले सेहि आदि नारी ।। १९ ।।
मोर तेज बळे तुमो असुरकु मार ।
भिन्न किछि नाहिं जाण तोहर मोहर ।। २० ।।
असुर नाशिबा पाइँ जन्मिअछु तुहि ।
एबे मोर तेज घेन देउअछि मुहिँ ।। २१ ।।
एते कहि आपणार तेज देले रखि ।
तहुँ पुष्पक रथरे बसिले सुमुखी ।। २२ ।।
रामंक बिहुने देबी होइ उन्मत्ता ।
असुर मारिबा पाइँ बाहारिले सीता ।। २३ ।।

गई। एक दिन, एक रात्रि में योगमाया प्रसन्न हो गई। १५ उन्होंने कहा कि तुम्हें कौन से वर की इच्छा है ? माँगने मात्र से ही मैं तुम्हें वही वर दे दूँगी। १६ राजरानी ने इस प्रकार की आकाशवाणी को सुनकर दोनों हाथ जोड़कर योगमाया की स्तुति की। १७ उन्होंने कहा कि माँ ! यदि तुम प्रसन्न हो गई हो तो जिस प्रकार यह बिलका राजा मरे उसी का उपाय मुझसे दया करके बता दो। ऐसा सुनकर आदिनारी योगमाया ने कहा। १८-१९ अरी सीते ! तुम मेरे तेज के बल से असुर का नाश करो। ऐसा समझो कि हममें और तुममें भिन्नता नहीं है। २० असुर संहार के लिए ही तुम अवतरित हुई हो। अब मैं तुम्हें अपना तेज प्रदान कर रही हूँ। तुम इसे ग्रहण करो। २१ इतना कहकर उन्होंने अपना तेज स्थापित कर दिया। तब सुन्दर मुखवाली सीता पुष्पक रथ पर बैठ गई। २२ राम के बिरह में देवी सीता उन्मत्त होकर असुर का विनाश करने के लिए चल पड़ी। २३ उन्होंने पुष्पक से कहा कि जहाँ पर लक्ष्मण असुर के साथ संग्राम कर रहे हैं वहाँ शीघ्र ही

बोइले रथकु तु हो जाअ बेग होइ ।
जहिँ लक्ष्मण संगरे असुर जुझइ ।। २४ ।।
आज्ञा मात्रे देवयान शून्ये गला चळि ।
समर भुमिरे जाइँ निमिषके मिळि ।। २५ ।।
असुर छातिरे हनु रुद्र मूर्त्ति धरि ।
बसि थिला चेता पाइ गरजन करि ।। २६ ।।
पेलि देला हनुमान पड़िलाक खसि ।
उठि हनुकु धइला हस्ते दृढ़े कषि ।। २७ ।।
काख तळे जाकि देइँ धाइँला असुर ।
लक्ष्मणंकु धरिबाकु बढ़ाइछि कर ।। २८ ।।
धनु धरि अनुक्षणे सुमित्रानन्दन ।
बिन्धुछन्ति तीक्ष्ण तीक्ष्ण बाण घन घन ।। २९ ।।
ब्रह्मशक्ति शूळशक्ति बज्रशक्ति बाण ।
अर्धा चन्द्र बाल जे शर नारायण ।। ३० ।।
बिष्णुचक्र बइष्णवी चक्र नारायणी ।
पाशुपत रुद्रशर चक्र कात्यायनी ।। ३१ ।।
नागपाश काळपाश पाश बरुणर ।
मारन्ति बिश्राम नाहिँ सुमित्रा कुमर ।। ३२ ।।
अग्निशर सूर्य्यशर ब्रह्मास्त्र आबर ।
पबन पर्बत आदि जेते देवशर ।। ३४ ।।

चलो । २४ आज्ञा देते ही देवरथ आकाश से चलकर एक क्षण में ही समरभूमि में जा पहुँचा । २५ रुद्र-रूप धारण करके हनुमान असुर की छाती पर बैठे थे । चेतना लौटते ही असुर के गर्जना करते हुए धक्का देने से हनुमान गिर पड़े । उसने उठकर हनुमान को हाथों से दृढ़तापूर्वक पकड़ लिया और काँख के नीचे दबाकर दौड़ पड़ा । उसने लक्ष्मण को पकड़ने के लिए हाथ फैलाया । २६-२८ सुमित्राकुमार धनुष उठाकर प्रतिपल सन-सनाते हुए तीक्ष्ण बाण चला रहे थे । २९ सुमित्रानन्दन ब्रह्मशक्ति, बज्रशक्ति, शूलशक्ति, अर्धचन्द्र, बावण, नारायण-शर, विष्णुशर, वैष्णवी तथा नारायणी चक्र, पाशुपत, रुद्रशर, कात्यायिनी चक्र, नागपाश, कालपाश, वरुणपाश मार रहे थे । उन्हें विश्राम नहीं था । ३०-३२ अग्निशर, सूर्यशर, ब्रह्मास्त्र, पवनास्त्र, पर्वतास्त्र आदि जितने देवबाण थे उन सबको तथा शूल, गदा, कृपाण और कुन्त आदि सभी को दैत्य मुँह फैलाकर निगल

सबु गिळि देला दैत्य बदन बिस्तारि ।
शूळ गदा असिपत्र कुन्त आदि करि ॥ ३४ ॥
सबु गिळि आँ आँ करि धाईला दइत ।
बेळुँ बेळ असुरर बळ अप्रमित ॥ ३५ ॥
बिन्धि बिन्धि सउमित्रि असकत हेले ।
भय पाइ जुद्ध तेजि तहुँ पळाइले ॥ ३६ ॥
गोड़ाइछि दानव जे रह रह काँहि ।
पळान्ति लक्ष्मण बीर पच्छकु न चाहिँ ॥ ३७ ॥
गोड़ाइछि दानब जे करि घोर रड़ि ।
हनुमान दानबर काँखु खसि पड़ि ॥ ३८ ॥
मूर्च्छा गला बीर गोटि बिषम आघाते ।
धाइँ धाइँ सउमित्रि भये त्रस्त व्यस्ते ॥ ३९ ॥
बोइले गो मात सूर्य्यबंश ठाकुराणी ।
दानब त भयंकर काळजम जाणि ॥ ४० ॥
धाइँ अछि निश्चे आजि खाइ जिब मोते ।
अजोध्यापुरकु तुम्भे पळा जा तुरिते ॥ ४१ ॥
काहिँ गल रघुकुळ नाथ आसि रख ।
गिरि गुहा परि दिशे दानबर मुख ॥ ४२ ॥

गया । ३३-३४ सबको निगलकर दैत्य आँ-आँ करके दौड़ा । धीरे-धीरे असुर की शक्ति अपरिमित होती जाती थी । ३५ सुमित्रानन्दन बाण छोड़-छोड़कर अशक्त हो गये । वह युद्ध का परित्याग करके भाग खड़े हुए । ३६ रुक जा ! रुक जा ! कहकर दानव ने उन्हें खदेड़ा । लक्ष्मण बिना पीछे की ओर देखे भागे जा रहे थे और वह घनघोर सिंहनाद करता हुआ उन्हें खदेड़ रहा था । तभी हनुमान दानव की काँख से गिर पड़े । ३७-३८ पराक्रमी महावीर विषम आघात पाकर मूर्च्छित हो गये । लक्ष्मण डर से अस्त-व्यस्त होकर बोले, हे सूर्यवंश की राजरानी माँ ! यह दानव तो भयंकर कालयम के समान लगता है । ३९-४० यह दौड़ रहा है । निश्चित रूप से यह हमें खा डालेगा । तुम शीघ्र ही अयोध्या पुर को भाग जाओ । ४१ हे रघुकुल के स्वामी राम ! तुम कहाँ चले गये ? आकर मेरी रक्षा करो । दानव का मुख पर्वत की गुफा के समान दिख रहा है । ४२ इस प्रकार का दुर्धर्ष दानव मैंने कहीं नहीं देखा । वह इस प्रकार कहते जाते थे और दौड़ते जाते थे । उन्हें विश्राम नहीं

एमन्त दुर्बार दैत्य देखि नाहिँ काहिँ ।
कहुछन्ति धाइँछन्ति विश्राम जे नाहिँ ॥ ४३ ॥
बुलिलिणि से प्रचण्ड गिरि चारि पाख ।
जोजनेक दीर्घप्रति करि गोटा जाक ॥ ४४ ॥
लक्ष्मण कातर बाणी शुणि बइदेही ।
पुष्पक रथरु देबी पड़िलेक डेइँ ॥ ४५ ॥
महाकाळी रूपकु से धइले से काळे ।
चिल आसि माछ झाम्पिनिए जेन्हे जळे ॥ ४६ ॥
पक्षींकि जेसने शून्ये बाजनिए मारि ।
तेसन तेड़े असुर गोटाकु से धरि ॥ ४७ ॥
भूमिरे पकइ माड़ि बसिले छातिरे ।
बज्र शूळ प्रहारिले असुर नाभिरे ॥ ४८ ॥
नाभि फूटि मही फूटि गला सेहि शूळ ।
सपत पाताळ भेदि भेदिला अतळ ॥ ४९ ॥
महाकाळी भइरबी रूप भयंकर ।
छार असुर तहिँकि केतेक मातर ॥ ५० ॥
क्षणकरे तार प्राण लिंग नेले हरि ।
सहार मूरति देबी महाभयंकरी ॥ ५१ ॥
सहस्र हस्तरे धरि सहस्रेक अस्त्र ।
सहस्र मुखरे तिनि सहस्र जे नेत्र ॥ ५२ ॥

था । ४३ वह पर्वत के चारों ओर लगभग एक योजन की दूरी तक चक्कर काटते रहे । ४४ लक्ष्मण की दयनीय आवाज को सुनकर देवी वैदेही पुष्पक विमान से कूद पड़ी । ४५ उस समय उन्होंने महाकाली का रूप धारण कर लिया । जिस प्रकार जल में चील आकर मछली को झपट लेती है अथवा आकाश में जैसे बाज पक्षी को मार लेता है उसी प्रकार उन्होंने उतने बड़े असुर को पकड़कर पृथ्वी पर गिरा दिया और उसकी छाती पर चढ़ बैठीं । उन्होंने असुर की नाभि में बज्रशूल से प्रहार किया । ४६-४८ नाभि को फोडकर पृथ्वी को फोड़ता हुआ वह शूल सप्तपाताल को भेदता हुआ अतल में घुस गया । ४९ महाकाली का भैरवी रूप भयंकर था । वहाँ पर तुच्छ असुर की क्या बिसात थी । ५० उन्होंने क्षण मात्र में उसके प्राणों को हर लिया । वह देवी विनाश की महान भयदायिनी मूर्ति थीं । ५१ सहस्र हाथों में सहस्र अस्त्र-शस्त्र

लह लह जीभ पुणि गह गह नाद ।
गह गह शुभुअछि निश्वास शबद ।। ५३ ।।
रह रह दानबरे जिबु आजि काहिँ ।
एहा कहि नाचुछन्ति दैत्य उरे रहि ।। ५४ ।।
चउद ब्रह्माण्ड जाक भये थर हर ।
बेळु बेळ भयंकर समुद्र जुआर ।। ५५ ।।
बड़बा अनळ शिख उपरकु उठे ।
गुप्ते दानब चर थिला तरु कोटे ।। ५६ ।।
पळाइ कहिला जाइँ राणीर अग्रते ।
उच्चे कहि न पारइ भये त्रस्त व्यस्ते ।। ५७ ।।
बहि पड़ुअछि तार नेत्र अश्रुजळ ।
भो दइब बोलि कर मारइ कपाळ ।। ५८ ।।
राणी बोइले रे चार कि हेला कि हेला ।
कि कहिबि मात बोलि चार जणाइला ।। ५९ ।।
अकस्माते काहुँ एक देबी धाइँ आसि ।
राजांकु पकाइ तांक छाति परे बसि ।। ६० ।।
नाभिरे मारिण शूळ हरि नेले प्राण ।
से देबी मूरति महाभयंकर जाण ।। ६१ ।।

धारण किये थीं । उनके सहस्रमुख में तीन हजार नेत्र थे । ५२ उनकी जीभ लपलपा रही थी । प्रचण्ड निनाद तथा विश्वास का प्रखरतर शब्द सुनाई दे रहा था । ५३ अरे दानव ! रुक जा ! आज तू कहाँ जाएगा ? ऐसा कहती हुई वह उसकी छाती पर नाच रही थीं । ५४ चौदहों ब्रह्माण्ड भय के कारण थरथरा रहे थे । जैसे धीरे-धीरे समुद्र का ज्वार भयंकरता से बढ़ता है और बड़वाग्नि की शिखा ऊपर को उठने लगती है । वहाँ एक दूत पेड़ की खोह में छिपा बैठा था । ५५-५६ उसने भागकर रानी के समीप जाकर कहा । वह भय से घबड़ाया हुआ था । उसके ऊँची आवाज नहीं निकल रही थी । ५७ उसकी आँखों से आँसुओं का जल बह रहा था । अरे भाग्य ! कहकर वह हाथों से शिर धुन रहा था । ५८ रानी ने पूछा, अरे दूत ! क्या हुआ ? क्या हुआ ? दूत ने कहा, हे माता ! मैं क्या कहूँ ? ५९ अकस्मात् कहीं से एक देवी दौड़कर आ गई । उसने राजा को गिरा दिया और वह उनकी छाती पर चढ़ बैठी । ६० उसने नाभि में शूल मार कर (राजा के) प्राण ले लिये । उस देवी की मूर्ति अत्यन्त भयंकर है । ६१ उसके न जाने कितने मुख, कितनी आँखें और कितने

केते मुख केते नेत्र केते तार हस्त ।
धरि अछइ से देबी असंख्य जे अस्त्र ।। ६२ ।।
लह लह जीभ करि घोटिछि ब्रह्माण्ड ।
बरन ताहार नव नीळ मेघखण्ड ।। ६३ ।।
देखि महाभय पाइ अइलि पळाइ ।
शुणि महाकोप करि उठे महादेई ।। ६४ ।।
बिलंका नगरे थिले जेतेक असुरी ।
समस्तंकु बोइला लो आस बेग करि ।। ६५ ।।
बिधबा होइ किम्पाइँ रहिबा ए पुरे ।
रण जज्ञ करिबा ना चाल लो समरे ।। ६६ ।।
जेते बाळ बृद्ध स्तिरी जुबा अछ बत्ति ।
समस्ते आस मृत्युकु न करिण भीति ।। ६७ ।।
स्वामी मानंकर शब इन्धन करिबा ।
रण भुइँ गोटा जाक कुण्ड निर्माणिबा ।। ६८ ।।
रुधिर घृतकु तहिँ करिबा आहुति ।
नर बानरंकु बळि देइ समापति ।। ६९ ।।
पशिबा अनळ कुण्डे कथा रहि थिब ।
राणीर मुखरु शुणि एमन्त प्रस्ताव ।। ७० ।।
सकळ असुरी आसि होइलेक रुण्ड ।
धरिछन्ति खण्डा छुरी असि जष्टि दण्ड ।। ७१ ।।

हाथ हैं ! वह देवी अगणित अस्त्र-शस्त्रों को धारण किये है । उसने जीभ को लपलपाते हुए ब्रह्माण्ड को आच्छादित कर रखा है । उसका वर्ण नव नील मेघखण्ड के समान है । ६२-६३ देखते ही बहुत भयभीत होकर मैं भाग आया । यह सुनते ही महारानी अत्यन्त क्रुद्ध हो उठी । ६४ बिलंका नगर में जितनी भी असुर-स्त्रियाँ थीं उनसे उसने शीघ्र ही आने को कहा । ६५ वह बोली कि विधवा होकर इस नगर में हम क्यों रहें ? चलो समरांगण में रणयज्ञ करें । ६६ जो भी बाल-वृद्ध-स्त्री युवक बचे हुए हैं सभी मृत्यु का भय न करके आएँ । ६७ अपने पतियों के शवों को ईंधन बनाकर सारी संग्रामभूमि को यज्ञकुण्ड बना देंगी । ६८ रुधिर रूपी घी की आहुति करेंगी । नर और वानरों की बलि देकर उसका समापन करेंगी । ६९ फिर अग्निकुण्ड में प्रविष्ट हो जाने से बात रह जायेगी । रानी के मुख से इस प्रकार का प्रस्ताव सुनकर सभी राक्षसियाँ आकर एकत्रित हो

हुळहुळि ध्वनिरे जे पूरिछि [illegible] पुर ।
बाळ वृद्ध जुबा थिले [illegible] ॥ ७५ ॥
समस्ते अइले एक [illegible] रहिल पुर ।
खुरणसि महादेई होइछि [illegible] ॥ ७६ ॥
हुळहुळि देइ आसुअछन्ति असुरी ।
एहा देखि महामाया बदन बिस्तारि [illegible] ॥ ७७ ॥
असुरी मानकु देले गर्भरे पुराइ ।
ए अद्भुत कर्म जहँ कले महामाई ॥ ७८ ॥
एणे मोह पाइ थिला पवननन्दन ।
महारुद्र मूरति कि करिण धारण ॥ ७९ ॥
बाळ वृद्ध जुबाकु से पकाइला मारि ।
निर्दय किचिते दया नाहिँ जे ताहारि ॥ ७७ ॥
सीतांकर से अद्भुत रूप देखि डरे ।
लक्ष्मण जे रहिलन्ति कर जोड़ि शिरे ॥ ७८ ॥
हनुमान खण्डे दूरे होइअछि उभा ।
दिग विदिग व्यापिछि जानकींक प्रभा ॥ ७९ ॥
हर ब्रह्मा आदि देबे भयरे कातर ।
बिलंका भुवने मिळि सकल अमर ॥ ८० ॥

गई। वह खाँड़ा, छुरी, तलवार और छड़ी, डण्डे लिये थी। ७०-७१ मंगल ध्वनि से महल गूंज उठा। बाल-वृद्ध-युवा जितने भी असुर थे सभी आ गये। एक भी घरों में नहीं रहे। महारानी मन्दोदरी आगे थी। ७२-७३ असुरबालाएँ मंगलिक शब्द करती हुई चली आ रही थीं। यह देखकर महामाया ने मुख फैलाकर राक्षसियों को गर्भ में डाल लिया। महामाया ने यह अद्भुत कार्य कर डाला। ७४-७५ वहाँ पवनपुत्र हनुमान मूर्च्छित पड़े थे। उन्होंने अत्यन्त रौद्रमूर्ति धारण करके आबाल-वृद्ध-युवकों को मार डाला। वह अत्यन्त निर्दय हो गये। उनके हृदय में थोड़ी भी दया नहीं आई। ७६-७७ वह सीता के अद्भुत रूप को देखकर डर गये। लक्ष्मण हाथ जोड़कर शिर में लगाये खड़े रह गये। ७८ हनुमान थोड़ी दूर पर खड़े थे। जानकी जी की प्रभा समस्त दिशाओं में व्याप्त हो रही थी। ७९ शिव, ब्रह्मा आदि देवता भय से कातर हुए बिलंका में आ गये। सब देवता शिर पर हाथ जोड़कर स्तुति करने लगे। हे संहारमूर्ति जानकी जी! आपकी जय हो। जय

कर दुइ शिरे देइ करुछन्ति स्तुति ।
जय जय जानकी गो संहार मूरति ।। ८१ ।।
जय जय जानकी गो रामर घरणी ।
तुहि माता जोगमाया संसार तारिणी ।। ८२ ।।
तुहि मा अनादि आदि शकति अभया ।
तुहि काळी कि कपाळी तु जया अजया ।। ८३ ।।
तोहर महिमा मा गो तुहि एका जाणु ।
मेरु होइ पाश तु गो होइ पारु अणु ।। ८४ ।।
जुगे जुगे रखु मा गो संकटु आम्भंकु ।
एक एक रूपे मा गो मारि दानबंकु ।। ८५ ।।
एमन्ते बहुत स्तुति कले देबगण ।
तहिंरे जहुँ जानकी नोहिले प्रसन्न ।। ८६ ।।
देखि हर ब्रह्मा बेनि जोड़िलेक कर ।
पढ़िले सहस्र नाम सीता देबींकर ।। ८७ ।।
से सहस्र नाम शुणि जनक दूलणी ।
बोइले ब्रह्मांकु चाहिँ आहे कुशपाणि ।। ८८ ।।
जे पढ़िब तोर कृत मो सहस्र नाम ।
ताहार पूर्ण करिबि निश्चे मनस्काम ।। ८९ ।।

हो ! ८०-८१ राम की गृहिणी जानकी ! जय हो ! जय हो ! हे माता योगमाया ! तुम संसार को तारनेवाली हो । ८२ हे माता ! तुम्हीं आदि-अनादि अभया शक्ति हो । तुम ही काली, कपाली, जया तथा अजया हो । ८३ माँ ! तुम्हारी महिमा केवल एक तुम ही जानती हो । तुम सुमेरु पर्वत के समान विशाल और अणु सदृश लघु हो सकती हो । ८४ हे माता ! युग-युग में तुमने हमें संकटों से बचाया है । एक-एक रूप धारण करके दानवों का संहार किया है । ८५ इस प्रकार देवताओं ने बहुत स्तुति की । तब भी जानकी जी प्रसन्न नहीं हुईं । ८६ यह देखकर ब्रह्मा तथा शंकर जी ने दोनों हाथ जोड़कर सीता देवी के सहस्र नाम (स्तोत्र) का पाठ किया । ८७ उस सहस्र नाम को सुनकर जनक-नन्दिनी ने ब्रह्मा की ओर देखकर कहा, हे कुशपाणि ! तुम्हारे द्वारा बनाये गये मेरे सहस्रनाम का जो व्यक्ति पाठ करेगा उसकी मन-कामना निश्चित रूप से मैं पूर्ण करूँगी । ८८-८९ उसके धन-जन-गोप और लक्ष्मी की

धन जन गोप लक्ष्मी बढ़िब ताहार।
कहिल जेउँ सहस्रनाम जे मोहर ॥ ९० ॥
त्रिसन्ध्यारे श्रद्धारे जे पढ़िब शुणिब।
नारीभय राजभय ताकु न लागिब ॥ ९१ ॥
सकळ बिपद मुहिँ खण्डिबि ताहार।
सत्य सत्य कहुछि मुँ आहे बेदबर ॥ ९२ ॥
मोर एहि महाकाळी रूप भयंकर।
एहि रूपे करइ मुँ जगत संहार ॥ ९३ ॥
ए रूपे मोते जे पूजा करिब श्रद्धारे।
गन्ध पुष्प धूप दीप देइ मो पयरे ॥ ९४ ॥
बळिभोजा देइ मोते पूजिब जे जन।
तार मन बांछा पूर्ण हेब पद्मासन ॥ ९५ ॥
बिच्छा मासे कुहु दिने जे पूजिब मोते।
ताहाकु अभयबर देबि ए जगते ॥ ९६ ॥
काहिँ अछन्ति हो स्वामी दिअ मोते आणि।
नोहिले ब्रह्माण्ड जाक भक्षिबि ए क्षणि ॥ ९७ ॥
देब कि दानब जज्ञ मानबहिँ नाग।
किन्नर गन्धर्व ऋषि कीटहिँ पतंग ॥ ९८ ॥
बृक्ष गिरि जळस्थळ न रखिबि मुहिँ।
शुणि महाभये देबे ब्रह्मामुख चाहिँ ॥ ९९ ॥

वृद्धि होगी, जो मेरे सहस्रनाम का पाठ करेगा। ९० जो भी भक्ति श्रद्धा से तीनों संध्या में इसका पठन-श्रवण करेगा, उसे नारी-भय, राज-भय लग नहीं सकता। ९१ उसकी समस्त बिपत्तियों को मैं नष्ट करूँगी। हे वेदवर (ब्रह्मा)! मैं यह सब कुछ सत्य ही कह रही हूँ। ९२ मेरा यह महाकाली का रूप भयदायक है। मैं इसी रूप से जगत का संहार करती हूँ। ९३ मेरे इस रूप की जो श्रद्धा-सहित पूजा करेगा, जो व्यक्ति मेरे चरणों में गन्ध-पुष्प-धूप-दीप तथा बलि प्रदान करके मेरी पूजा करेगा, हे पद्मासन! उसके मन की कामना पूर्ण होगी। ९४-९५ जो कार्तिक मास की अमावस्या को मेरी पूजा करेगा उसे इस संसार में मैं अभय वर प्रदान करूँगी। ९६ मेरे स्वामी कहाँ गये हैं? उन्हें लाकर मुझे दो। नहीं तो इसी क्षण सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को भक्षण कर डालूंगी। ९७ देव, दानब, यक्ष, मानव, नाग, किन्नर, गंधर्व, ऋषि, कीट, पतंग, वृक्ष, पर्वत,

कि करिबा काहुँ देब काहिँ छन्ति राम ।
इन्द्र पचारिले जाणु तुहि कि हो जम ॥ १०० ॥
डरे जमराजा कम्पे होइ थर हर ।
रामंकु कि रखिबाकु शक्य मुहिँ छार ॥ १०१ ॥
नागमानंकु जे चाहिँ बोइले बासब ।
पाताळपुरर कथा जाण तुम्मे सर्ब ॥ १०२ ॥
श्रीराम अछन्ति काहिँ जाणिथिले कह ।
न देलेटि न रहिब ए आम्भर देह ॥ १०३ ॥
चन्द्रचूळ नामे नाग बोइला एमन्त ।
अन्ध कूपे पकाइला असुर दुद्दर्न्त ॥ १०४ ॥
मुँ ताहांकु रखिअछि मो पुरे जतने ।
मणिनाग बोले देव सहस्र लोचने ॥ १०५ ॥
भरतकु बिषकूपे पकाइला नेइ ।
जतन करि मो पुरे अछि मुहिँ थोइ ॥ १०६ ॥
आदित्य देबता तहुँ बोइले एमन्त ।
कपिराज सुग्रीबकु नेइ से दुरन्त ॥ १०७ ॥
तप्त कूपे पकाइला जाइथान्ता पोड़ि ।
पुत्र जाणि किरणकु नेलि तहुँ काढ़ि ॥ १०८ ॥

जल, स्थल में कुछ भी नहीं छोड़ूँगी । यह सुनकर देवता लोग ब्रह्मा के मुख की ओर देखकर डरकर कहने लगे कि कहें । रामचन्द्र जी कहाँ हैं ? उन्हें कहाँ से दें ? इन्द्र ने तब यमराज से पूछा कि क्या तुम्हें पता है ? ९८-१०० भय से यमराज थरथराकर काँपने लगे । क्या मैं एक तुच्छ श्रीराम की रक्षा करने में समर्थ हूँ । १०१ इन्द्र ने नागों की ओर देखते हुए कहा कि तुम सब पातालपुर के विषय में जानते हो । १०२ श्री रामचन्द्रजी कहाँ हैं ? यदि जानते हो तो बताओ । न देने से हम लोगों का शरीर नहीं रहेगा । १०३ तब चन्द्रचूल नाग इस प्रकार कहने लगा कि दुर्दान्त दैत्य ने उन्हें अन्धे कुएँ में गिरा दिया था । मैंने उन्हें यत्नपूर्वक अपने महल में रखा है । मणिनाग ने कहा, हे देव सहस्र-लोचन ! उसने भरत को लेकर विषकूप में गिरा दिया था । मैंने उन्हें यत्नपूर्वक अपने महल में रखा है । १०४-१०६ तब सूर्यदेव इस प्रकार बोले कि उस दुर्धर्ष दैत्य ने कपिराज सुग्रीव को ले जाकर तप्त कूप में गिरा दिया था । वह जल जाते परन्तु मैंने पुत्र जानकर अपनी किरणों को खींच लिया था । १०७-१०८ वह वहीं पर पड़ा है, पर

पड़िअछि तहिँ तार नाहिँ एका प्राण ।
ताहाकु जिआइ तहुँ जाइँ काढ़ि आण ॥ १०९ ॥
शीतळ होइछि जळ पारिब त पशि ।
एमन्त शुणि बासब मने होइ खुशि ॥ ११० ॥
बोइला शत्रुघ्न काहिँ अछि किए जाण ।
नारद बोइले जाणे आहो सुरराण ॥ १११ ॥
बिश्वाबसु गन्धर्वर भारिजा रखिछि ।
असुर माया मन्दिर सेहि रहिअछि ॥ ११२ ॥
बासब बोइले आण बिळम्ब न कर ।
चन्द्र चूळ जाइँ आणि देला रघुबर ॥ ११३ ॥
मणिनाग भरतकु आणि देला बेगे ।
तपत कूपरे पशि बुड़ि बुड़ि नागे ॥ ११४ ॥
सुग्रीवकु आणि देले नाहिँ तार प्राण ।
नारद पाताळपुरे मिळिले तक्षण ॥ ११५ ॥
रत्नाबती सहितरे शत्रुघ्नकु आणि ।
देले से बिलंकापुरे जहिँ बज्रपाणि ॥ ११६ ॥
अमृत सिंचिले इन्द्र बंचिला सुग्रीव ।
बंचिले अंगद नळ नील जे जाम्बव ॥ ११७ ॥
बिभीषण बंचिला जे अमृत सिंचन्ते ।
देखि देबी बडदेही रामंक अग्रते ॥ ११८ ॥

उसके प्राण नहीं है। उसे जिलाकर वहाँ से निकाल लाइये। १०९ उसका पानी ठण्डा होने से उसमें घुस सकते हो। ऐसा सुनकर इन्द्र मन में प्रसन्न हो गये। ११० उन्होंने कहा कि शत्रुघ्न कहाँ है? कोई जानता है? नारद ने कहा, हे देवराज! मैं जानता हूँ। १११ विश्वावसु गन्धर्व की पत्नी ने उन्हें रखा है। वह असुर के मायामहल में है। ११२ इन्द्र ने कहा कि देर न करके उन्हें ले आओ। चन्द्रचूल जाकर रघुश्रेष्ठ श्रीराम को ले आया। मणिनाग ने शीघ्र ही भरत को ला दिया। तप्तकूप में घुसकर डूबते-उतराते नागों ने सुग्रीव को ला दिया, केवल उसके प्राण नहीं थे। नारद उसी क्षण पाताल जा पहुँचे। ११३-११५ उन्होंने रत्नावती-सहित शत्रुघ्न को लाकर बिलंका पुर में वज्रपाणि इन्द्र को समर्पित कर दिया। ११६ इन्द्र द्वारा अमृत-सिंचन करने से सुग्रीव बच गये। नल, नील, अंगद और जामवन्त भी जीवित हो गये। ११७ अमृत छिड़कने से

प्रसन्ने से रूप तेजि भजिलेक शान्ति ।
जय जय शबदरे पूरे बसुमती ।। ११९ ।।
श्रीराम बोइले इन्द्र बदनकु चाहिँ ।
गन्धर्वङ्कपुर आझु हेला एहि भुइँ ।। १२० ।।
एहा कहि देबतांकु देलेक मेलाणी ।
पुष्पक रथे बसिले जनक दूलणी ।। १२१ ।।
श्रीराम भरत हनु शत्रुघ्न सुग्रीव ।
बिभीषण नळ नीळ अंगद जाम्बव ।। १२२ ।।
समस्ते बसिले रथ गला शून्य मार्गे ।
जुद्ध कथा हनु कहे श्री रामंक आगे ।। १२३ ।।
शुणि बिचारन्ति सर्बे बसि एहि रथे ।
एमन्त दानव काहिँ देखि नाहुँ नेत्रे ।। १२४ ।।
धन्य तु लक्ष्मण जाहा माइलु ताहाकु ।
बञ्चाइले सीता देबी आसि जे आम्भंकु ।। १२५ ।।
एमन्त जे कुहाकुहि हेउँ गला रथ ।
निमिषके अजोध्यारे हेला उपगत ।। १२६ ।।
चातक पराये लोके चाहिँथिले बसि ।
पुष्पक बिमान शून्ये देखि हेले खुसि ।। १२७ ।।

विभीषण भी जी गये। यह देखकर देवी वैदेही ने श्रीराम के समक्ष प्रसन्नता से वह रूप त्याग दिया और वह शान्त हो गईं। सम्पूर्ण भूमण्डल जयघोष से भर गया। ११८-११९ श्रीराम ने इन्द्र के मुख की ओर देखते हुए कहा, इस नगर की भूमि आज से गन्धर्वों की हो गई। १२० ऐसा कहकर उन्होंने देवताओं को विदा दी। जनकनन्दिनी पुष्पक रथ पर बैठ गईं। १२१ श्रीरामचन्द्रजी, भरत, शत्रुघ्न, हनुमान, सुग्रीव, विभीषण, नल, नील, अंगद और जामवन्त सभी के बैठ जाने से विमान आकाश में उड़ गया। हनुमान ने श्रीराम के आगे युद्ध के समाचार वर्णन किये। १२२-१२३ यह सुनकर उस विमान में बैठकर सब लोग विचार करने लगे कि इस प्रकार का दैत्य कहीं भी हमने अपने नेत्रों से नहीं देखा था। १२४ हे लक्ष्मण! तुम धन्य हो। तुमने उसे मार डाला। सीता देवी ने आकर हम लोगों को बचा लिया। १२५ इस प्रकार का विचार-विनिमय होते-होते विमान क्षणमात्र में अयोध्या में जा पहुँचा। १२६ लोग चातक के समान बैठे ताक रहे थे। आकाश में पुष्पक विमान को देखकर वह सब प्रसन्न हो गये। १२७ कोई बोला कि देखो पुष्पक विमान आ

के बोइला अइलाणि देख गो पुष्पक ।
के बोइला अछन्ति त अजोध्या नायक ॥ १२८ ॥
के बोइला बसिछन्ति जनक दुलणी ।
के बोइला लक्ष्मण जे होइ धनुपाणि ॥ १२९ ॥
बसिछन्ति भरतंक पाखरे गो देख ।
शत्रुघ्न त बसिछन्ति ताहांकर पाख ॥ १३० ॥
के बोलइ हनुकु गो देख किना तुहिँ ।
कर जोड़ि प्रभुकर आगे अछि रहि ॥ १३१ ॥
बानर राजाकु देख बसिअछि पाखे ।
बिभीषणहिँ अछइ तार बाम पाखे ॥ १३२ ॥
नळ नीळ जाम्बव त अछन्ति गो तहिँ ।
कहुँ कहुँ रथ जाइँ पुररे मिळइ ॥ १३३ ॥
कउशल्या देबी देखि पुत्रर बदन ।
धाइँ आसि स्नेह देले बदने चुम्बन ॥ १३४ ॥
सकळ माताए आसि मिळिलेक तहिँ ।
सीता जोगुँ बञ्चिलु जे रामचन्द्र कहि ॥ १३५ ॥
शुणिण समस्ते कले सीताकु प्रशंसा ।
सीता राम पादे चक्रधरर भरसा ॥ १३६ ॥

॥ बिलंका रामायण (उत्तरखण्ड) समाप्त ॥

गया। किसी ने कहा कि अयोध्या के नायक तो हैं। १२८ कोई बोला कि जनकनन्दिनी तो बैठी हैं। किसी ने कहा कि धनुष हाथों में लिये लक्ष्मण भी देखो भरत के पास बैठे हैं। शत्रुघ्न भी उन्हीं के निकट बैठे हैं। १२९-१३० किसी ने कहा कि तुम हनुमान को देख रहे हो या नहीं। वह हाथ जोड़े भगवान के सामने हैं। १३१ कपिराज को भी देखो पास में बैठे हैं तथा उनके वाम भाग में विभीषण भी हैं। १३२ नल, नील, जामवन्त भी वहीं हैं। बातों-बातों में विमान नगर में पहुँच गया। १३३ देवी कौशल्या पुत्र का मुख देखकर दौड़कर आ गईं और प्रेम से मुख चूमने लगी। १३४ सभी माताएँ भी वहाँ आ पहुँचीं। वह कहने लगी कि सीता के कारण ही रामचन्द्र बच गये। १३५ यह सुनकर सभी ने सीता की प्रशंसा की। श्री सीता-राम जी के चरणों में ही चक्रधर का आश्रय है। १३६

॥ बिलंका रामायण (उत्तरखण्ड) समाप्त ॥